युवक : खूब होश है मुझे ! जहाँ व्यक्ति का मूल्य नहीं, उसकी भावनाओं की इज्जत नहीं—वहाँ इस शादी का कोई मूल्य नहीं।

युवती के पिता : ऐसा मत कहो बेटा ! मैं तुमसे हाथ जोड़ता हूँ।

युवक : आज मैं संयोग से डिप्टी-कलक्टर न हुआ होता, तो क्या आप बासन्ती से मेरी शादी करते ? नहीं, कभी नहीं ! हर्गिज नहीं !

युवती के पिता : शुकुलजी, समझाइए इसे !

युवती के पिता : जज साहब, मैं ऐसे लौंडों से अब बात नहीं करना चाहता। खतम हुआ सब ! इसकी यह हिम्मत जो मेरी बात काट दे ! तुझे पता है, मैं तेरा बाप हूँ।

युवक : जी पता है !

युवक के पिता : क्या पता है ?

युवक : कि लोग कहते हैं कि आप मेरे बाप हैं !

युवक के पिता : (क्रोध में) क्या कहा ? मैं तेरी जुबान खींच लूंगा। तू मुझसे मजाक करता है ? तू मेरे गुस्से को नहीं जानता ? अरे, मैं तेरी डिप्टी-कलक्टरी को तेरे सिर में डाल दूंगा।

युवती के पिता : शान्त रहिए शुकुलजी ! इस तरह यहाँ गार्डेन में गुस्सा करने से कोई फायदा नहीं !

युवक के पिता : हैं जी !

युवती के पिता : चलिए, चला जाए अब यहाँ से।

युवक के पिता : जी हाँ, अब मैं घर पर पहुँचकर इत्मीनान से अपना यह गुस्सा करूँगा। आजकल के लौंडे अपने-आपको समझते क्या हैं ? चलिए, चला जाए अब यहाँ से ! ओहो, हद्द हो गई ! हैं जी !

[दोनों बुजुर्ग चुपचाप दायीं ओर से निकल जाते हैं। युवक बायीं ओर से जाता है। सहसा उसी ओर पृष्ठभूमि से किसी की हँसी सुनाई देती है।

युवक : जी, कौन हैं आप ?

एक आदमी : एक आदमी !

युवक . आप यहाँ इस तरह क्यों छिपे बैठे थे ?

एक आदमी : जी यह पार्क है ! मैं वहाँ बेंच पर बैठा था—क्यों ? आपको कोई एतराज है क्या ?

युवक : आपको हँसी किस बात पर आई ?

एक आदमी : हँसी आती है—इसलिए आई ?

युवक : तो आप यहाँ हमारी 'पर्सनल' बातें सुन रहे थे। आप लेखक-वोखक तो नहीं हैं ?

एक आदमी : वोखक तो नहीं, हाँ, लेखक जरूर हूँ।

[आदमी बढ़कर बैण्ड-सर्किल में चढ़ जाता है।]

युवक : (**वहीं नीचे से ही**) आप कवि हैं या कहानीकार ?

एक आदमी : जी मैं नाटक लिखता हूँ।

युवक : ओहो ! तो आप नाटककार हैं ! आपका शुभ नाम ?

एक आदमी : क्यों ? आप मुझ पर कोई मुकदमा चलायेंगे क्या ? भाई, आप मजिस्ट्रेट हैं।

युवक : जी नहीं। पर आपसे मैं यह वचन चाहता हूँ कि आप इस पर कोई नाटक नहीं लिखेंगे। यह मेरा व्यक्तिगत प्रेम विषय है।

एक आदमी : व्यक्तिगत प्रेम-विषय ! तो फिर आप बासन्ती से अपना ब्याह क्यों नहीं कर लेते ?

युवक : मैं ब्याह नहीं कर सकता !

एक आदमी : आखिर क्यों !

युवक : मेरा अपमान हुआ है।

एक आदमी : लड़की के बाप ने आपका अपमान किया है—इसमें बेचारी लड़की का क्या दोष ?

युवक : वह भावनाहीन है।

एक आदमी : हो सकता है, उसका प्रेम मौन हो।

युवक : यह आपको कैसे पता ? आप मुझे अच्छे आदमी नहीं लग रहे हैं।

एक आदमी : आप तो अच्छे आदमी हैं न ?

युवक : आपसे मतलब ?

एक आदमी : मुझे आपसे सिर्फ यही कहना है कि आप उस लड़की से शादी क्यों नहीं कर लेते ?

युवक : मैं पूछता हूँ आपसे मतलब ? इन्हें खामख्वाह इतनी चिन्ता हो आई कि मैं उस अच्छी नेक सीधी-सादी लड़की से शादी क्यों नहीं कर रहा हूँ।

एक आदमी : जी, आप मुझे इस तरह डाँट क्यों रहे हैं ?

युवक : क्योंकि यह मुझे अच्छा लग रहा है।

एक आदमी : आप बड़े अच्छे आदमी हैं।

युवक : आप किसी दूर के रिश्ते से लड़की के भाई तो नहीं हैं ?

एक आदमी : क्यों ? तब आप उससे शादी कर लेंगे क्या ?

युवक : (**आवेश में**) अजी आप कौन होते हैं इस तरह उस लड़की की शादी के लिए वकालत करने वाले ? आपको क्या पता कि पिछले कितने सालों से मैं किस तरह की आग में जल रहा हूँ।

[तेजी से युवक का बायीं ओर प्रस्थान। वह एक आदमी वहीं आश्चर्यचकित खड़ा रह जाता है।]

वही आदमी (**दर्शकों से**) देखिए न, वह नाटक यहीं अकस्मात् खत्म हो गया। नाटक का हीरो ही एकाएक चला गया। बेचारी हीरोइन का तो कुछ पता ही न चला।

वह तो दृश्य में ही न आई। क्या करूँ मैं ? बस, इतना देखा ही था मैंने वह खेल ! पता नहीं, आगे क्या हुआ इसका अन्त ? ठीक है—आप लोगों को तो पता ही चल गया होगा। अच्छा नमस्ते ! मेरा यह नाटक खत्म !

[सहसा दर्शकों में से एक व्यक्ति उठ खड़ा होता है।]

व्यक्ति : अजी नाटक वहाँ कैसे खत्म हुआ ? अब क्या छिपाऊँ—संयोग से वह असली धर्मेन्दु तो मैं हूँ यहाँ ! (**बगल में बैठी लड़की को उठाता हुआ**) आओ चलो बासन्ती ! वहाँ ऊपर चलें !

[दायीं ओर से वे दोनों आते हैं।]

आदमी : (**तब तक**) अरे गजब हो गया यह तो ! भाई, माफ करना धर्मेन्द्र बाबू ! मैं वह नाटककार नहीं हूँ जिसने आपको उस पार्क में देखा था। मैं सिर्फ एक आदमी हूँ। (**भाव बदलकर**) आइए-आइए, चले आइए, शरमाइए नहीं। हाँ, हाँ, सीढ़ियों से ऊपर चढ़ जाइए। डरिए नहीं ! यह अल्फ्रेड पार्क का वह असली बैण्ड-सर्किल नहीं है।

[दोनों बैण्ड-सर्किल में जाकर खड़े हो जाते हैं।]

धर्मेन्द्र : जी, मैं ही वह धर्मेन्द्र हूँ। और यह वही बासन्ती है। आप लोगों के आशीर्वाद से तभी हम लोगों का ब्याह हो गया।

[सहसा दर्शकों में से एक दूसरा व्यक्ति उठ खड़ा होता है।]

दूसरा व्यक्ति : अरे सिर्फ ब्याह क्यों कहता है बेटा ? हैं जी ! प्रेम-विवाह कह न ! हैं जी !

आदमी : जी, आप कौन हैं ?

दूसरा व्यक्ति : हैं जी, घबराइए नहीं। मैं वहीं आकर आपको बताता हूँ। हाय राम ! अब तो परदा-फाश हो ही गया है !

आदमी : आइए'''आइए'''तशरीफ ले आइए !

[बायीं ओर से दूसरे व्यक्ति का प्रवेश।]

दूसरा व्यक्ति : (**दर्शकों से**) हैं जी ! मैं इस असली धर्मेन्द्र का वह असली पिता हूँ—श्री दीनबन्धु शुक्ला। हैं जी ! दरअसल बड़ा तेज है यह मेरा बेटा। 'वेरी फास्ट' जिसको अंगरेजी में कहते हैं। बासन्ती बेटी के यह पिता (**सहसा दर्शकों से**) हैं जी, आप भी तो कहीं नहीं छिपे हैं यहीं ! शुक्र है वह नहीं हैं यहाँ। हाँ जी, तो मैं यह बता रहा था कि वह जज साहब—श्री यशोनन्दजी वाजपेयी एक बड़े ही टेढ़े आदमी थे। अव्वल दरजे के शक्की, क्रोधी और मक्खीचूस ! और बहनो ! अगर मेरे इस लाड़ले बेटे ने उनसे 'नहीं-नहीं' कर वह नाटक न रचा होता, हैं जी, तो मेरे बेटे और बासन्ती की शादी न हो पाती। और अगर बड़ी मुश्किल से करते भी

तो मुझे और मेरे बेटे को ब्याह में एक पैसा भी न मिलता ! हैं जी ! क्योंकि यह प्रेम-ब्याह था न !

बड़ा अच्छा नाटक था यह। हैं जी ! (आदमी से) हम पर यह नाटक लिखकर आपने काम तो अच्छा नहीं किया है—पर खैर जाइए माफ किया आपको ! हैं जी, जरा अपने ऐक्टरों को तो यहाँ बुलाइए, मैं उनसे मिलना चाहता हूँ !

[दायीं ओर से युवक के सभी अभिनेताओं का प्रवेश—आगे-आगे वही युवक के पिताजी की भूमिका करने वाला है।]

पिताजी : हैं जी, आप ही हैं वह !

युवक के पिता : हैं जी, आप ही हैं वह !

पिताजी : वही एक ही सवाल, हैं जी ?

युवक के पिता : वही एक ही सवाल, हैं जी !

पिताजी : खैर ! मुझे आप सबसे मिलकर बड़ी खुशी हुई—हैं जी !

[ऊपर बैण्ड-सर्किल में जाकर]

पिताजी : भाइयो और बहनो ! अपने बेटे की इस शादी की खुशी में मैं आप सबको एक डिनर देना चाहता हूँ—हैं जी, आप लोग अपने-अपने घर जाकर खुशी से मेरा वह डिनर खाइए ! हैं जी !

[परदा]

गाँव का ईश्वर

पात्र

शिवपाल
रामपाल
रतन
सिद्धू
जतन
केशर
माँ

[**स्थान, मंच-सज्जा** : गाँव के मध्य वर्ग के परिवार का कमरा, और लड़की के ब्याह का दिन ।

गाँव के एक मध्य वर्ग का परिवार । पिछले महीने से सतत तैयारी करता हुआ आज यह परिवार अपनी लड़की की शादी करने जा रहा है । दिन के तीसरे पहर का समय है । आज ही शादी है, इसलिए घर-परिवार, हित-सम्बन्धी सभी अपने दायित्व में व्यस्त हैं । आँगन में मड़वा शोभा दे रहा है । इसके पास ही केशर की सखियाँ गोलाई में बैठी हुई ढोलक पर ब्याह के मंगल-गीत गा रही हैं । आँगन के आगे ही बरामदे का कमरा । इसी कमरे में नाटक का पर्दा उठता है । इस कमरे में एक चारपाई खड़ी है, एक बिछी है, दो मोढ़े भी रखे हैं । कमरे में दिन का प्रकाश सामने से नहीं आ रहा है बल्कि आँगन से छन-छनकर आ रहा है । इस तरह स्टेज सामने से अपेक्षाकृत अँधेरा है, पीछे आँगन में मड़वे के आसपास दिन का प्रकाश है । पर्दा उठने पर स्टेज वैसे तो सूना है, लेकिन आँगन से बाहर आने-जाने का कार्य लगा हुआ है । आँगन में ढोलक पर मंगल-गीत उभर चुका है । गाती हुई स्त्रियाँ और मड़वे की छवि सब मुख्य स्टेज के पीछे दिखाई दे रहा है ।

पर्दा उठने के कुछ ही क्षणों बाद, शिवपाल दायें हाथ में हुक्का लिए हुए आँगन से मंच पर आया है । आते ही आते इसके व्यक्तित्व का अहं, झुंझलाहट और आवेश तीनों की अभिव्यक्ति स्पष्ट होती है ।]

शिवपाल : हुँ ! नहीं आता तो न सही । इसकी क्या चिन्ता । हुँ···कल के छोकरे और नाम बरियार सिंह ।

[हुक्के पर मुँह लगाता है, तब तक आँगन से बढ़कर माँ कमरे के दरवाज़े से लगकर खड़ी हो जाती है, जैसे वह शिवपाल के व्यवहार का विरोध करने आई हो ।]

शिवपाल : (**घूमकर**) जतन की माँ ! मैं साफ-साफ बातें करता हूँ—तुम रतन की माँ हो, तुम्हें उस पर बहुत गुमान है, लेकिन तुम उसे जानती नहीं कि वह कितना बड़ा रंगा सियार है । (**रुक जाता है**) जो लड़का बाप की राय में न रहा, जिस जंघे से पैदा हुआ उसी की वह खिलाफत करने लगा, उसका क्या भरोसा ?

माँ : (**दरवाजे से लगी हुई**) लेकिन मुझे तो फिर भी विश्वास है कि मेरा रतनू बेटा मुझे धोखा न देगा ।

शिवपाल : (**बीच ही में**) धत् तेरे की ! (**व्यंग्य से हँसकर**) मेरा रतनू बेटा ! मेरा रतनू बेटा ! (**गंभीरता से**) जतन की माँ, मैं तो समझता हूँ कि इतनी रट अगर तूने ईश्वर

की लगाई होती तो अब तक अपना सब काम पूरा हो गया होता। रुपये भी इकट्ठे हो गए होते, केशर बेटी की विदाई का सब सामान तैयार हो गया होता···और और···क्या-क्या गिनाऊँ, सब कुछ हो गया होता।

[माँ दुश्चिन्ता में चुप है।]

शिवपाल : अब चुप बैठने से काम नहीं चलेगा। (**हुक्का रखता है**) अभी कुछ ही घण्टों बाद बारात सर पै आ के बैठ जाएगी, फिर लेने के देने पड़ जाएँगे, फिर तुम्हारा रतन आकर ही क्या करेगा ? ऐसी संतान से तो बे-संतान ही भला।

माँ : फिर मैं और क्या करूँ ?

शिवपाल : क्या करूँ !

[सोचता हुआ चारपाई पर बैठ जाता है, क्षण भर बाद फिर उठता है।]

शिवपाल : अपने रुपयों में से कुछ रुपये मुझे दो।

माँ : कैसे मेरे रुपये ? मेरे रुपये कैसे ?

शिवपाल : अरे वही, जो कुछ काट-कपट, नैहर-बैहर के रुपये। मैं शादी के बाद तुम्हें वापस कर दूँगा जतन की माँ, विश्वास रखो।

माँ : हाय दइया ! कैसी बातें तुम कर रहे हो ? केशर की क्या मैं माँ नहीं हूँ ? क्या मेरी बेटी नहीं ब्याही जा रही है ? फिर मैं और किस दिन के लिए रुपये छिपाकर रखूंगी। सब अपने रुपये मैंने खुद खर्च कर दिए। सेंदुर मँगवाया, डिबियाँ मँगवाईं, उरद लिए, चार पसेरी महीन चावल खरीदे···और···।

शिवपाल : (**बात काटता हुआ**) यानी तुम्हारे पास अब कुछ नहीं है ?

माँ : कुछ क्यों नहीं है। कुल पन्द्रह रुपये बाकी हैं मेरे पास। उसमें द्वारपूजा है, बेटी के पांव पूजने हैं, कोहबर में दामाद को देने हैं, खिचड़ी खिलाई देनी है, मिलाइ पर देना है, मुझे तो पग-पग पर देने ही हैं ? (**रुककर**) रतनू ने लिखा था कि मैं ज़रूर आऊँगा, चिन्ता न करना माँ !

शिवपाल : (**बिगड़कर**) हटाओ रतनू की बात ! बार-बार रतनू-रतनू, जैसे वह न आएगा तो मेरी बेटी की शादी न होगी।

माँ : (**याचना से**) इसमें बिगड़ने की क्या बात है ? इससे तो कुछ नहीं होगा।

शिवपाल : इसमें बिगड़ने की जो बात है, उसे मैं जानता हूँ। जतनू की माँ, तू नहीं जानती। वह बेईमान इस शादी के ही खिलाफ है, यही है सब बातों की जड़।··· खैर, ईश्वर मालिक है। (**पास जाकर**) अब यह बताओ, कोई ऐसा गहना-वहना है तुम्हारे पास, जिसे मैं गिरवी रख सकूँ ?

माँ : बस दो-चार छोटे-मोटे चाँदी के ही गहने हैं।

शिवपाल : (**सोचकर**) हुँ ! ···और वह जो तुम्हारे पास सोने की नथुनी थी, जिसे पहन कर तुम गौने आई थीं ?

माँ : उसे मैं किसी और को नहीं दे सकती, उसे मैं केशर बेटी की नाक में पहनाकर

विदा करूँगी।

[एकाएक बाहर से कोई शिवपाल को पुकारता है, आवाज़ सुनते ही माँ भीतर चली जाती है और शिवपाल बाहर देखने लगता है।]

शिवपाल : (**स्वागत करता हुआ**) आओ सिद्धू काका ! आओ !!

[सिद्धू का प्रवेश, सिर पर फेंटा, बदन पर मिर्जई और हाथ में डंडा।

शिवपाल : (**नम्रता से**) राम-राम काका !

सिद्धू : राम-राम भइया ! राम-राम !

[चारपाई पर बैठता है, हुक्का उठाता है।]

शिवपाल : (**पुकारता हुआ**) अरे जतनू ! ···ओ जतनू !

[जतनू बाहर से आवाज़ देता है : आवत हई काका ! और दौड़ता हुआ प्रवेश करता है। इसके व्यक्तित्व में गाँव के जवान की पूरी छाप है।]

शिवपाल : (**संकेत कर**) जाओ, चिलम भर लाओ।

[जतनू चिलम लेकर भीतर चला जाता है और शिवपाल मोढ़े को खींचकर सिद्धू के सामने बैठ जाता है।]

शिवपाल : बड़ी मुसीबत है काका ! सच, मैं तो कहता हूँ अगर ईश्वर लड़की दे तो साथ ही साथ खूब रुपया भी दे, नहीं तो बेकार। बस समझो काका कि हाथ मल-मल के रह जाना पड़ता है।

सिद्धू : लेकिन शिवपाल ! लड़कियाँ तो अपनी-अपनी किस्मत लेकर आती हैं। सुना है, पुराण में लिखा है कि ईश्वर गर्भ के अन्दर पहले दोनों हाथ बनाता है, फिर पेट बनाता है। (**रुककर**) और फिर लड़कियाँ तो देवी की अवतार हैं। कहते हैं कि 'जेहि घर कन्या पाँव न पूजा, अधम अकारण जनम न दूजा।'

शिवपाल : वाह ! वाह ! सत्य है चौधरी काका। (**रुककर**) लेकिन आजकल तो बस ज़माना उलट गया है और कुछ नहीं।

सिद्धू : ज़माने की याद मत दिलाओ शिवपाल ! किन-किन बातों को लेकर रोएँ ? ··· हाँ भले याद आया। अभी परसों की ही तो बात है। एक काम से मैं स्टेशन गया था। वहाँ एक आदमी ने एक मसला कहा, क्या गज़ब की बात कही। कहा कि 'पहले घी से सब्जी बनती थी, अब सब्जी से घी बनता है। पहले औरत जनती थी, अब सारा आलम जनता है।'

शिवपाल : बिल्कुल सही, बिल्कुल सही ! तभी तो दुनिया धँस रही है काका ! जो अपने तन से पैदा हुआ है, वही दुश्मन बन रहा है, समझ रहे हैं न ?

सिद्धू : (**जिज्ञासापूर्ण चिन्ता से**) क्या अब तक रतनू नौकरी से नहीं लौटा ? शहर से नहीं आया अब तक ?

[सहसा भीतर से जतनू चिलम चढ़ाकर लौटता है और हुक्के पर चिलम रखकर उसे सिद्धू को सादर देता है और वहीं खड़ा रहता है।]

शिवपाल : यहाँ आने की उसकी जरूरत ही क्या ? में तो अब उसका मुँह नहीं देखना चाहता।

सिद्धू : (बीच ही में) च्'' च्'''च्'''राम'''राम'''राम, ऐसी बात नहीं। शिवपाल '''ऐसी बात नहीं। रतनू अपनी संतान है, जेठा लड़का है और जेठा लड़के बड़े भाई के बराबर होता है। और रतनू तो घर का चिराग़-सा बेटा है। अपने पैरों पर रहकर उसने इतना पढ़ा है कि गाँव की इज्ज़त बढ़ गई। फिर क्यों तुम उसके बारे में ऐसा सोचते हो ?

शिवपाल : दूर की ढोल सुहावन लागे काका ! यह पक्की कहावत है। लेकिन रतनुआ की वजह से जो-जो मुझ पर बीत रही है, वह मेरा कलेजा ही जानता है।

सिद्धू : (हुक्के का कश लेकर) आखिर बात क्या है ?

शिवपाल : (जतन को खड़ा देखकर) तुम यहाँ खड़े-खड़े क्या कर रहे हो? आओ इन्तजाम देखो।

जतन : कौन इन्तज़ाम देखी काका ? सब ठीक-ठाक ह्वैगे बाय।

शिवपाल : जनवासा ठीक हो गया है ?

जतन : जनवासा काव काका ?

शिवपाल : अरे उल्लू के पट्ठे, जहाँ बारात टिकेगी वही जनवासा। और क्या उत्तर-वाली बाग में। जाओ, देखो वहाँ सब झाड़-बुहारकर ठीक हो गया है कि नहीं।

जतन : काका ! बरतिया में नाच आई कि नाईं ?

शिवपाल : (क्रोध से क्षणभर देखने के बाद) तुझे तो बस नाच से मतलब है ? चाहे घर की नाक कटे या रहे ! भाग यहाँ से जल्दी ! जा अपने इन्तज़ाम देख।

[जतन डरकर चला जाता है। सिद्धू हुक्के को शिवपाल को देता है।]

शिवपाल : (कश लेकर) सिद्धू काका ! रतनवा से लाख दर्जे जतनवा मेरा अच्छा बेटा है। माना कि वह चार अक्षर पढ़ा नहीं है, बाहर से कुछ कमाकर नहीं भेजता—लेकिन यह लायक तो है, अपने कब्जे में है ! जो कुछ कह दूँ, तुरन्त बजा लाएगा, चूँ नहीं कर सकता ! खेती-बारी, घर-खलिहान सबकी जिम्मेदारी अपने कधों पर लिए हुए है।

सिद्धू : (गंभीरता से) और रतन ? वह नालायक है न ! क्योंकि उसने तुम्हारे रोकने पर भी अपने पुरुषार्थ से दर्जा बारह तक पढ़ लिया है, क्योंकि शहर में वह नौकरी करता है और हर महीने पचास रुपये भेजता है, इन्हीं वजहों से वह नालायक है न ?

शिवपाल : काका ! तुम उसके बारे में इतना ही जानते हो न। यह तो कोई बड़ी बात नहीं हुई। लेकिन वह किस तरह मेरे और खानदान के साथ दुश्मनी कर रहा है, तुम इसे नहीं जानते, काका !

[हुक्का रख देता है, सिद्धू चुप है।]

शिवपाल : तुम्हें मालूम ही है कि उसने अपनी शादी नहीं की। मैं बारहा उसे कहके-मनाके हार गया, लेकिन वह शादी के खिलाफ ही रहा। वह कहता है कि 'मैं अभी पढ़ूँगा, मेरे कुछ लक्ष्य हैं। (**व्यंग्यपूर्ण**) न जाने क्या लक्ष्य है; उसे पूरा करके ही शादी करूँगा···सोचो काका ! शादी-विवाह तो ईश्वर की चीज है, ईश्वर का धर्म है। ये आजकल के लौंडे इसमें अपनी टाँग क्यों अड़ाते हैं ?

सिद्धू : जमाना बदल रहा है शिवपाल !

शिवपाल : लेकिन जब तक मैं जिन्दा हूँ तब तक नहीं। (**रुककर**) सोचने की बात है काका ! रतनुआ इसी पूस में तीस वर्ष का हो जाएगा। कब उसका लक्ष्य पूरा होगा, कब उसकी शादी होगी, कब उसके बाल-बच्चे होंगे, इसे ईश्वर ही जाने। मुझे तो लगता है कि रतनुआ की पीढ़ी के ही बाद इस खानदान का पेड़ समाप्त हो जाएगा।

सिद्धू : जतनू तो है ही ! ऐसा अशुभ क्यों भाखते हो ?

शिवपाल : हे भगवान् ! इसी को तो लेकर रोना है काका ! कहावत है कि 'बड़ा रोके आगा, छोटा बने अभागा।' रतनुआ के आगे जतनुआ की शादी कैसे हो काका ! ···नहीं तो मैं रतनुआ की परवाह करता ? वह भाड़ में जाए ससुरा !!!

[शिवपाल आवेश में उठता है।]

सिद्धू : (**उठकर समझाते हुए**) अभी भूल जाओ इन बातों को शिवपाल ! आज बेटी की शादी है, इसकी चिन्ता करो। (**शिवपाल चिन्ता में चुप है**) सब चीज का प्रबन्ध हो गया है न ? या अभी कुछ प्रबंध करना बाकी है ?

शिवपाल : (**दुख से**) क्या बताऊँ काका ! रतनुआ ने मेरे साथ बहुत बड़ा विश्वासघात किया। (**टहलने लगता है**) खैर ईश्वर मालिक है, कन्यादान तो हो ही जाएगा काका ! फिर आगे कोई किसी की किस्मत थोड़े ही जानता है। (**टहलने लगता है**) काका ! तब तक तुम यहीं बैठो—इन्तज़ाम देखो। मैं कुछ प्रबन्ध करने जा रहा हूँ।

[शिवपाल भीतर जाकर डंडा-छाता लेता है और बाहर चल देता है। स्टेज पर अकेले सिद्धू रह जाते हैं। कुछ क्षणों के उपरान्त आँगन में मड़वे के नीचे स्त्रियाँ इकट्ठी होती हैं। फिर थाली में फूल-अक्षत लेकर गाती हुई आँगन से स्टेज पर आती हैं और दायीं ओर से बाहर निकल जाती हैं। उनका मंगल-गीत क्षण भर के लिए पृष्ठभूमि भर जाता है और धीरे-धीरे शान्त हो जाता है। बायीं ओर से सहसा रामपाल के पुकारने की आवाज उठती है—'गजाधर हया हो ! ऐ गजाधर !' दूर से प्रत्युत्तर आता है—'अवत्त हई अवत्त'।

सिद्धू : (**दूर से रामपाल को इधर ही आते देखकर**) ओहो ! रामपाल।

रामपाल : (**बायीं ओर से प्रवेश करके**) राम-राम काका, राम-राम !

सिद्धू : राम-राम···राम-राम···आओ बैठो ! किसे पुकार रहे थे ?

[रामपाल उसी मोढ़े पर बैठता है, जिस पर शिवपाल बैठा था।]

रामपाल : (**बैठते-बैठते**) गजधरा को बुला रहा था काका कि आज जरा भैंस-गोरू जल्दी बाँध दे।

सिद्धू : हाँ, हाँ जरूर···जरूर, क्यों नहीं।

रामपाल : भैया कहाँ हैं ? दिखाई नहीं पड़ रहे हैं। (**आँगन की ओर देखकर**) घर भी सूना लग रहा है।

सिद्धू : औरतें अभी गाँव-देवता परछने-पूजने गई हैं और शिवपाल कुछ प्रबंध करने गए हैं। (**रुककर**) क्या कहा जाय, अभी तक रतनू नहीं आया। भगवान ही पार लगाए। कैसे सब काम होगा, शादी-ब्याह इज्जत का मामला है। पता नहीं, आज कल के लौंडे पढ़-लिखकर भी क्यों ऐसे हो जाते हैं। रतनू को आना तो चाहिए।

रामपाल : मेरा तो पूरा विश्वास है कि वह जरूर आएगा काका ! बेचारा किसी प्रबन्ध में फँस गया होगा। (**रुककर**) सोचने की बात है काका। रतन शहर में कुल एक सौ बीस रुपये पाता है और अगर हर महीने की तीसरी तारीख को वह पचास रुपये भैया के पास न भेज दे तो ये उसकी बुरी गति बना देते हैं। फिर आप सोचिए काका !

सिद्धू : फिर भी तो शिवपाल रतनू से बहुत ही नाखुश रहता है।

रामपाल : (**रुककर**) क्या बताऊँ काका ! आप तो भैया का स्वभाव जानते ही हैं। मुझे ही देखिए, मैं उनका सगा-सहोदर भाई हूँ, लेकिन उन्होंने कितने बुरे ढंग से मुझको अलग कर रखा है। (**रुककर**) भैया तो अपने आगे किसी को समझते ही नहीं। अपनी बात, अपना गुस्सा, इनसे ये कभी अलग ही नहीं हो सकते।

[बाहर से जतनू आता है और बहुत तेजी से आँगन में चला जाता है। आँगन में पुकारने लगता है—'काकी ! फुआ ! ओ फुआ !' झुंझलाता हुआ स्टेज पर लौट आता है।]

जतन : सब लोग घर के घर कहाँ चला गइन बाबा ?

सिद्धू : आ ही रही होंगी ! सब लोग देवता पूजने गई हैं, कहो क्या बात है ?

जतन : बरात कै एक बैलगाड़ी जनवासे माँ पहुँच गै। ओका दाना-पानी कुछ देवै क चाही न !

रामपाल : घबराने की बात नहीं है जतनू ! जरा दम मारने दो उसे। फिर सब हो जाएगा। (**रुककर**) और देखो, तब तक जल्दी से चिलम भर लाओ न !

[जतनू चिलम लेकर भीतर जाता है।]

रामपाल : रतनू अपने परिवार का जेठा लड़का है—पढ़ा-लिखा लायक, चार पैसा कमाने वाला, लेकिन उसकी बातों की इज्जत भैया इतनी भी नहीं करते। (**रुककर**) वह शुरू से ही केशर की शादी के खिलाफ था। वह बार-बार भैया से

हाथ जोड़कर कहता हुआ हार गया कि 'काका ! अभी केशर की शादी मत करो ! अभी तो वह पूरे तेरह साल की भी नहीं हुई है। आप उसकी शादी की चिन्ता न कीजिए। यह जिम्मेदारी मुझ पर छोड़ दीजिए।' लेकिन ये कब के मानने वाले ? जो चाहते हैं वही करते हैं, नंगा खुदा से बड़ा !

[जतनू चिलम भरकर लौटता है और हुक्के पर रखकर सिद्धू को देता है, तथा खड़ी की हुई चारपाई को बिछाकर उस पर सहसा लेट जाता है।]

रामपाल : (उसे देखकर) यह आराम करने का वक्त है जतनू ?

जतन : (अँगड़ाई लेता हुआ) काका ! बहुत थक गयन हम तो। समुरा आज पनरहियन से दौड़न-दौड़त करेजा झाँझर ह्वै जात बाप। (फिर उठता है) हमारे बड़का भैये मजे में बाटन।

रामपाल : अरे जा बेटा ! तू तो लायक लड़का है।

[बड़बड़ाता हुआ बाहर निकल जाता है।]

रामपाल : तो समझ रहे हैं न काका !

सिद्धू : (हुक्का रामपाल को देते हुए) हूँ···शिवपाल का स्वभाव तो जरूर है ऐसा ?

रामपाल : स्वभाव ही नहीं काका ! भैया के कर्तव भी उलटे हैं। गुस्से में अंधे हो जाते हैं। (हुक्का पीकर) रतन हमारे अनपढ़ परिवार का चिराग है। वह सब चीज को नए ढंग से सोचता है।

सिद्धू : सही है !

रामपाल : रतनू, भैया को यही तो सलाह दे रहा था कि केशर की शादी अभी न हो। वह अभी नादान है। लेकिन चूँकि रतन ने उन्हें यह सलाह दी, इस पर वे गुस्से से लाल हो गए कि केशर की शादी होगी तो इसी साल होगी और इस जल्दी में उन्होंने बेचारी केशर की शादी कितनी गलत जगह तै कर डाली।

सिद्धू : हाँ भाई ! सुना है कि दूल्हे की उमर तीस साल के करीब है।

रामपाल : (विस्मय से) तीस साल ? मुझे तो सब-कुछ मालूम है। दूल्हे की यह तीसरी शादी है। उसकी दो औरतें मर चुकी हैं। (हुक्का रखता हुआ) उसकी पहली शादी रामपुर से हुई थी और वह दुल्हन गौने के बाद ही मर गई। दूसरी शादी लखरौली से हुई थी, वह भी दो साल के बाद चल बसी।

सिद्धू : (दुख से) ओह ओ ! और शिवपाल को भी वही घर मिला।

रामपाल : घर तो बहुत अच्छा है काका ! पक्के साठ बीघे की सीर है उसके पास। कछार में भी उसके चालीस बीघे जमीन है। दूध, धन, लक्ष्मी से तो उसका घर भरा पड़ा है, लेकिन···।

सिद्धू : तब लेकिन-वेकिन कुछ नहीं, जब घर है तो सब-कुछ है। मैं भी रामपाल, यही मानता हूँ कि शादी-ब्याह, वर-वधू सब-कुछ ईश्वर के अधीन हैं। ईश्वर जो कुछ भी जिसे दे, उसे लेना पड़ता है।

रामपाल : (**खिन्न होकर**) क्या बात करते हैं काका आप भी ! ईश्वर ! ईश्वर !! आदमी भी तो कुछ है। ईश्वर ने उसे भी तो आँखें दी हैं, आखिर किसलिए ?

सिद्धू : तो तूने शिवपाल को कोई सलाह नहीं दी ? तुम इसका विरोध करते !

रामपाल : (**डरकर उठता हुआ**) मैं सलाह देता, विरोध करता ! राम-राम, डंडा लेकर टूट पड़ते मुझ पर ! (**रुककर**) सोचने की बात है काका ! जो बाप रतनू-जैसे लायक बेटे की सलाह न मान सका, उल्टे उस पर इतने क्रोध से भर गए कि भइया ने रतनू को यह लिख भेजा कि 'हमने केशर की शादी लक्खूपुर में तै कर ली है। शादी इसी साल होगी, तुम चाहे घर आओ या न आओ।'

[सहसा पृष्ठभूमि में औरतें गाती हुई वापस लौटती हैं और धीरे-धीरे स्टेज के एक किनारे से बढ़ती हुई आँगन में चली जाती हैं और वहाँ उनके गीत रुक जाते हैं।]

सिद्धू : (**उठते हुए**) खैर, अब हटाओ इन बीती बातों को रामपाल ! अब तो ईश्वर को जो मंजूर था, वह हुआ। शादी शुभ हो जाए, हम लोगों को अब यही देखना है।

रामपाल : शादी तो हो ही जाएगी काका ! उसमें तो ऐसी कोई बात नहीं है। मुझे तो चिन्ता बस केशर और रतनू की है।

सिद्धू : और अभी कुछ प्रबन्ध भी तो करना है। शिवपाल इसीलिए कहीं गया है।

रामपाल : वह क्या प्रबन्ध करेंगे काका। मुझसे सब कहलवाइए नहीं। भइया ने अपने रोब में पूरा घर तबाह कर डाला। (**रुककर**) मालूम है, बड़ी लड़की रेशमा की शादी में उन्होंने कितना खर्च किया था ? भाभी के बदन पर उन्होंने एक भी गहना न रहने दिया और केशर की शादी ?···यह सब रतनू का रुपया है। और जो अभी प्रबंध करना है, जिसके लिए भइया बड़े रोब से बाहर गए हैं, वह तो महज़ दिखावा है। उन्हें यह खूब मालूम है कि रतनू यह भी सब प्रबन्ध करके आएगा ही। (**रुककर**) न आएगा तो वह जाएगा कहाँ ? उसे यह सुख की रोटी खाने देंगे ? (**रुककर**) और काका ! ईश्वर की सौगन्ध कहता हूँ कि रतनू तो खुद यह सब होते हुए भी अपने तईं इतना ज़िम्मेदार, इतना लायक है कि क्या कहूँ। ईश्वर करे कि पिछड़े हुए गाँवों के उजड़ते हुए घर-घर में रतनू जैसे रतन पैदा हों काका !···बस काका···हाँ काका !!

[सहसा दौड़ता हुआ जतन स्टेज पर आता है और वह प्रसन्नता से 'एक बैलगाड़ी और आयगै काका ! नचियो आयगै काका !' यह कहता हुआ भीतर जाता है और कुछ ही क्षणों के बाद बर्तन में कुछ लिए हुए वह बाहर भागता है।]

सिद्धू : घराती की तरफ से अपने सब नात-वात आ गए हैं न रामपाल ?

रामपाल : हाँ काका, करीब-करीब सभी आ गए हैं, जो बाकी हैं, आज रात-बिरात आ ही जाएँगे।

[सहसा एक लड़का पृष्ठभूमि में 'रतनू भैया आ गए ! रतनू भैया आ गए !!' खुशी में चिल्लाता हुआ स्टेज पर आता है, अपनी खुशी प्रकट करता है। आँगन

में खबर फैलाता है और फिर बाहर भाग जाता है। रामपाल और सिद्धू जिज्ञासा-पूर्ण मुद्रा में एक-दूसरे को देखते हैं।]

रामपाल : मैंने कहा न काका ! मुझे खूब मालूम था कि वह आएगा।
सिद्धू : हाँ, हाँ, क्यों नहीं ? क्यों नहीं ?

[पृष्ठभूमि में गाँव के बच्चे प्रसन्नता से कह रहे हैं—'रतनू भइया !···आ गए रतनू भइया !!' पहले एक मज़दूर अपने सिर पर बड़ा-सा बक्स लिए हुए स्टेज पर आता है, रामपाल बढ़कर बक्स को उतरवाता है। उसके बाद गाँव के बच्चों के साथ रतन प्रविष्ट होता है। धोती-कुरता और उस पर जवाहर बनियान। कंधे पर दायें हाथ में पकड़े हुए एक गठरी भी है। उसके प्रवेश करते ही सिद्धू और रामपाल उसका हृदय से स्वागत करते हैं। रतन उन दोनों के चरण स्पर्श करता है। आँगन की स्त्रियाँ दरवाज़े पर आकर खड़ी हो गई हैं। रतन उनकी ओर बढ़ता है और माँ के चरण छूकर वापस आ जाता है। जिज्ञासु बच्चे अपनी-अपनी आशाओं में एकटक रतन की ओर देख रहे हैं। रतन पहले पैसे देकर मज़दूर को विदा करता है, फिर वह बच्चों की तरफ देखता है और अपनी गठरी खोलने लगता है।]

सिद्धू : कहो आनन्द से थे न बेटा ?
रतन : हाँ बाबा ! आप लोगों की कृपा से सब ठीक ही था। (**रुककर**) यहाँ सब आनन्द है न ?
सिद्धू : हाँ, सब आनन्द है—गाँव, घर, परिवार सब आनन्द से हैं। तुम्हारे ही लिए बस चिन्ता थी।
रतन : मैं तो आता ही, मेरी क्या चिन्ता ? (**रुककर**) और सब ठीक है न ? सब इन्तज़ाम ठीक है ?
रामपाल : (**सिद्धू के साथ चारपाई पर बैठता हुआ**) हाँ, सब ठीक है, इन बच्चों को पहले बिदा कर दो रतनू बेटा !
रतन : (**गठरी खोलकर हँसता हुआ**) अच्छा, वही कर रहा हूँ काका।

[रतन एक-एक बच्चे को स्नेह से मिठाई बाँटता है, फिर भी बच्चों में अशान्ति स्पष्ट है।]

एक बच्चा : (**ठुनककर**) रतनू दादा ! हमें गुब्बारा चाहिए ! गुब्बारा !!
दूसरा : और हमें पिपिहिरी चाहिए ! पिपिहिरी !!
तीसरा : हम तो मूँगफली लेंगे रतनू भइया !

[रतन सबकी इच्छाओं को पूरा करता हुआ उन्हें विदा करता है। पृष्ठभूमि में बच्चे सीटियाँ बजाते हैं। सहसा आँगन से माँ का प्रवेश। माँ के हाथ में शर्बत से भरा हुआ लोटा और गिलास है।]

माँ : (**प्रवेश करते-करते**) बेटा, लो शर्बत पी लो पहले।

[मोढ़े पर रख देती है और वहीं सिद्धू की तरफ से अपने मुख पर घूँघट किए हुए खड़ी रहती है। कुछ क्षणों के बाद सिद्धू और रामपाल बाहर जाने के लिए तैयार होते हैं।

रामपाल : (**उठकर**) अब तो तुम आ ही गए हो रतन। पानी-वानी पियो, फिर बातें होंगी ही।

सिद्धू : हाँ, जनवासे में भी अब देखना ज़रूरी है, हम लोग चलें!

रतन : काका, रुकिए! (**बढ़कर तेज़ी से बक्स खोलता है**) मैं आपके लिए कुर्ता सिलाकर लाया हूँ काका! (**निकालकर देता हुआ**) यह लीजिए।

रामपाल : (**लेकर**) इसकी क्या जरूरत थी? क्या तुम्हारी झंझटों को मैं नहीं जानता?

रतन : (**चिंतित हो जाता है एकाएक**) यह सब तो चलता ही रहता है। पिताजी कहाँ हैं काका?

रतन : (**माँ की ओर उत्सुक होकर**) क्या पिताजी कहीं बाहर गए हैं?

माँ : (**स्नेहसे गिलास में शर्बत डालकर उसे देती हुई**) लो, पहले शर्बत पी लो! वे आ ही रहे होंगे।

रतन : (**शर्बत पीकर**) कहाँ गए हैं आखिर?

माँ : आज जब तुझे अगोरते-अगोरते वे निराश हो गए बेटा, तब अभी कुछ प्रबन्ध करने के लिए बाहर गए हैं।

रतन : (**चिंता से टहलने लगता है**) मुझे अगोरते-अगोरते? (**रुककर दुख से**) लेकिन माँ, उन्होंने तो मुझे साफ फटकारकर लिख दिया था कि तुम मेरी बेटी की शादी में मत आना। (**रुककर**) फिर वे मेरा इन्तज़ार क्यों कर रहे थे?

माँ : वे ऐसे ही हैं बेटा! उनकी बातों पर मत जाओ।

रतन : (**सोचता हुआ**) तो जो कुछ बाकी है, क्या पिताजी प्रबन्ध कर लेंगे?

माँ : क्या बात करते हो बेटा! ऐसा बुरा ज़माना आया है कि उधार-बाढ़ी को कौन कहे, कोई ले-देकर भी कुछ सहायता नहीं करता।

रतन : खैर, मुझे तो प्रबन्ध करना ही था। (**बक्स खोलकर माँ को सहेजता हुआ चारपाई पर रखता जाता है**) यह रुपया है। यह तुम्हारे पहनने के लिए साड़ी है, यह पाँव पूजने की चुनरी है। यह समधी का जोड़ा है, यह दूल्हे का कपड़ा है, यह बिहउती चुनरी है। ये चार साड़ियाँ और हैं—एक काकी के लिए, एक फुआ के लिए, एक सुहाग के ढकने के लिए और यह एक मामी को दे देना। (**रुककर**) और हाँ, पहाड़पुर से मामा की लड़की सीता भी आई है न? उसे यह दुपट्टा दे देना। उसकी बड़ी साध थी दुपट्टे के लिए, मैं लेता आया।

रतन : और बाकी सब सामान सहित यह पूरा बक्स केशर के लिए है। कपड़ा-लत्ता, शीशा-कंघी सब कुछ है इसमें।

माँ : इसकी मुझे बहुत चिन्ता थी, तुम न आते तो केशर क्या लेकर विदा होती? कैसे

ससुराल जाती ?

रतन : केशर क्या कर रही है माँ ?

माँ : कोहबर के घर में बैठी है, नहीं तो वह कई दिनों से तुम्हारे लिए रो रही थी। रो-रोकर गौर पूज रही थी कि किसी तरह मेरा रतन भइया आ जाए।

रतन : वह अभी से रो रही है माँ ?

[रतन खाट पर बैठ जाता है और करुणा से अभिभूत सिर को हाथों पर टिकाए नीचे पृथ्वी पर आँखें गड़ा देता है जैसे वह रो रहा है।]

माँ : जो होना था सो हो गया बेटा ! ईश्वर को यही मंजूर था। (पास आकर स्नेह से उठाती हुई) ऐसे नहीं बैठते बेटा ! आज शुभ दिन है।

[सहसा पृष्ठभूमि में शिवपाल की पुकार आती है—'बहदुरा रे ! ओ बहदुरा !

माँ : वे आ गए बेटा ! उठो !!

[शिवपाल का प्रवेश, रतन उठकर उनका 'जै रामजी की' से अभिवादन करता है। शिवपाल अपना छाता-डंडा रखता हुआ एक ही दृष्टि में जैसे सारा वातावरण देख लेता है।]

शिवपाल : हुँ ! तुम आ गए ? (रुककर, चारपाई पर बैठता हुआ) मैं समझता था कि तुम नहीं आओगे क्योंकि तुम्हें मुझसे विरोध है, केशर की शादी से विरोध है। मेरी सब चीजों से तुम्हें दुश्मनी है।

माँ : (बीच में ही) क्या बक रहे हैं आप ? थका-माँदा इतने दिनों पर मेरा बेटा अभी आया है, और लगे देखते ही लड़ने—न कुशल न समाचार !

शिवपाल : चिलम भर लाओ जतनू की माँ !

[माँ एक तीखी दृष्टि से शिवपाल की ओर देखती है, फिर चिलम लेकर भीतर चली जाती है, रतन चुप, निश्चेष्ट चिंता में डूबा हुआ खड़ा है।]

शिवपाल : अगर तुम न भी आते तो मैं कल सुबह तक सारा प्रबंध कर लेता। (रुककर) ईश्वर जब बाप को लड़की देता है, तब वह साथ ही साथ उसे गज भर का कलेजा भी देता है, जिससे बाप के घर उसे किसी का मुँह न देखना पड़े। और जब वह पति के घर जाती है, तब तो पति उसका ईश्वर है ही।

रतन : (क्रोध दबाए हुए) आप कहना क्या चाहते हैं ? मतलब क्या है आपका ? सारी बातें तो आपने पूरी कर लीं, अब और आप क्या चाहते हैं ?

शिवपाल : कुछ नहीं ! ओहो ! मैं तो पद की बात कर रहा था, तुम नाखुश क्यों होते हो ?

रतन : ठीक है ! (रुककर) मैं ही नाखुश हो रहा हूँ।

[माँ चिलम भर लाती है, हुक्के पर रखकर शिवपाल को देती है।]

माँ : (ताव से कपड़े उठाकर) आँख फाड़ के देख लो, मेरा बेटा सारा प्रबन्ध करके

आया है। ये सब कपड़े ! (**दिखाती हुई**) वह केशर की बिदाई का भरा हुआ बक्सा !! देख लो जी भरकर।

शिवपाल : (**बीच ही में**) और रुपये ?

रतन : रुपये भी लाया हूँ'''और अपनी जान भी लाया हूँ। आप मेरे बाप हैं, आपने मुझे जन्म दिया है—आप इसे भी ले लीजिए।

माँ : (**बढ़कर रतन को सम्हालती है**) ऐसा नहीं कहते बेटा ! इनकी बात पर तू क्यों जाता है ?

[गुस्से से शिवपाल को देखने लगती है, सब चुप हो जाते हैं, माँ फिर कपड़ों सहित अन्दर चली जाती है। क्षणभर के बाद जतन प्रविष्ट होता है।]

जतन : ओ हो रतन भइया ! राम-राम !

रतन : राम-राम भाई ! कहो आनन्द से हो न ?

जतन : हुँ !(**रुककर**)काका !बरात आइगै ! चलो बाहिरे सब इंतजाम तो देख लेव।

शिवपाल : (**उठता हुआ**) अच्छा।

[दोनों का प्रस्थान, क्षण भर बाद भीतर से माँ का प्रवेश।]

माँ : (**जैसे मनाती हुई**) कपड़े बदल डालो बेटा ! आओ आँगन में चलो, मैं तुम्हारे पैर धो दूँ ! तुम थके होगे !

रतन : नहीं, सब ठीक है माँ ! केशर को ज़रा यहाँ भेज दो। यह बिदाई का बक्स मैं उसे सहेज दूँ।

[माँ भीतर जाती है। कुछ क्षणों के बाद ही पृष्ठभूमि में तुरही, ढोल-डफले के बजने की आवाज उभरती है, जिससे स्पष्ट हो जाता है कि बारात आ गई। स्टेज पर अकेला रतन अपनी दुश्चिन्ताओं में टहलता रहता है। आँगन से धीरे-धीरे लड़कियों की चहल-पहल खत्म हो जाती है। कुछ क्षणों के बाद केशर कोहबर के कमरे से निकलकर आँगन में आती है और मड़वे को पार करती हुई धीरे-धीरे स्टेज पर आती है। वह पीली पड़ गई है। उसके सारे कपड़े तेल और उबटन से मैले पड़ गए हैं। नतमस्तक निश्चेष्ट इस तरह स्टेज पर आती है, जैसे वह पहले की चंचल, स्वस्थ, वाचाल और जीवनपूर्ण केशर नहीं है, बल्कि उसकी छाया है। वह व्यक्ति नहीं है, उसका एक आभास है। स्टेज पर आकर पहली दृष्टि से वह रतन को देखती है, फिर नतमस्तक हो जाती है। रतन उसे अपलक देखता रहता है।

रतन : (**पास आकर असीम स्नेह से**) तूने मुझे नमस्कार नहीं किया केशर। लेकिन मैं तुझे आशीर्वाद ही क्या देता ? केशर सिर उठा ! बोल कुछ भी बोल, कुछ हठ कर मुझसे, झगड़ मेरी दुलारी मुन्नी !

[**केशर उसी तरह निश्चेष्ट मौन है।**]

रतन : (**स्नेह से सिर ऊँचा करता हुआ**) क्या देख रही है नीचे ? (**आश्चर्य से**) अरे, रो रही है ? (**दुश्चिन्ता में चुप हो जाता है**) रो नहीं बहन, नीचे धरती में क्या देख रही है तू ? अपनी रेशमा दीदी को देख रही है ?

[रतन तेजी से आँगन में जाता है। इधर-उधर देखता है और फिर स्टेज पर आ जाता है।]

रतन : मत देख नीचे केशर, सिर उठा, नहीं तो यह घर, यह गाँव, यहाँ का ईश्वर तुझे इसी तरह जिन्दा गाड़ देगा इसी धरती में। (**इधर-उधर देखकर**) केशर ! एक बात सुन, आँगन अभी सूना है, लोग बारात देखने में लगे हैं। चल भाग चल। मैं तुझे इसी तरह शहर ले चलूंगा, छिप जाऊँगा तुझे लेकर।

[केशर चीखती है—'नहीं भइया ! ऐसा नहीं !' उसके पैरों से लिपट जाती है, रतन उसे उठाता है, उसमें उत्साह भरने की कोशिश करता है, लेकिन केशर अडोल, शक्तिहीन रोती हुई बैठी रहती है।]

रतन : हिम्मत कर केशर ! मेरी बात मान जा ! भाग चल मेरे साथ यहाँ से ! शहर में मैं तुझे पढ़ाऊँगा, सयानी करूँगा, और जब जीवन के प्रति तेरा दृष्टिकोण निश्चित हो जाएगा, तब तेरी शादी करूँगा—ठीक तेरे ही योग्य वर से।

[केशर निश्चेष्ट रोती ही रहती है, जैसे वह गतिशून्य है। वह जहाँ बैठी है, वहाँ से उठना नहीं चाहती। रतन उसे देखता है और अपनी खाली मुट्ठियाँ भींच-भींचकर रह जाता है। फिर वह हार कर बक्स उठाता है, चारपाई पर रखकर उसे खोलता है।]

रतन : (**बक्स खोलकर**) तेरा क्या दोष केशर ! तेरे जन्म ही से तो तुझे यह सिखाया गया है कि ईश्वर ने भाग्य में जिस पति को लिखा था, वह मिला। अब दूसरा कैसे हो सकता है ? (**रुककर**) ठीक है न केशर ? अब तो बोल, (**रुककर**) अच्छा इधर देख, मैं तेरे लिए यह सब सामान लाया हूँ। यह तेरी बिदाई का बक्स है न ! देख केशर ! मेरी ओर देख !!

[केशर थोड़ा-सा सिर उठाती है फिर गिरा लेती है।]

रतन : ये दो रेशमी साड़ियाँ हैं। ये चार साड़ियाँ इकलाई की हैं। यह साड़ी समधिन को देकर उसके पैर छूना। और यह तेरे सुहाग की साड़ी है। यह बारहगजी लहँगा है, यह दुपट्टा है—इसे पहन कर तू ढोलक पर गीत गाना। यह तेरी लाल चुनरी है—इसे पहन कर तू कोहबर में जाना। (**रुककर**) और इसे भी देख केशर, यह कोरा कपड़ा है आधा थान। (**उसे देखता हुआ**) चल केशर, भाग चल यहाँ से, चल !

केशर : (**सिसकती हुई**) नहीं भइया, नहीं···।

रतन : (**पीड़ा से**) तो क्या तुझे यह मंजूर है ? यह कफन मंजूर है तुझे ? नहीं-नहीं-नहीं,

ऐसा नहीं होगा केशर ! चल तू मेरे साथ निकल चल ! तेरा कुछ न बिगड़ेगा। मैं तेरा रतन भइया हूँ न ?

[लेकिन केशर उसी तरह अडोल रोती हुई बैठी रहती है।]

रतन : अच्छा ! तो फिर तू इसे भी संभालकर रख ले केशर !

[सहसा पृष्ठभूमि से लड़कियों के हँसने की आवाज़ उभरती है। रतन एकाएक केशर को देखकर रो पड़ता है और एक ही दृष्टि में वह सब चीज़ों को एक बार देखकर धीरे से बाईं ओर से बाहर निकल जाता है। केशर उसी तरह बैठी रहती है। आँगन से माँ प्रवेश करती है।]

माँ : रतन कहाँ है केशर ?

केशर : (सिर उठाती है) भइया !···कहीं चले गए क्या ? यहीं तो थे अभी ?

[केशर आँख पोंछती हुई उठ खड़ी होती है और इधर-उधर देखने लगती है।

माँ : (विकलता से) मेरा रतन कहाँ गया ?

[केशर सिसकती हुई आँगन में चली जाती है। माँ उसके पीछे-पीछे जाती है और पृष्ठभूमि में पुकारने लगती है—'रतन ! ओ रतन !!' सहसा स्टेज पर शिवपाल आता है, वह भी रतन को पूछता आता है। माँ आकर शिवपाल से पूछती है। कमरे के भीतर, दरवाज़े पर फिर घर की औरतें आश्चर्य से खड़ी हो जाती हैं। सिद्धू आते हैं।]

शिवपाल : रतन न जाने कहाँ चला गया काका !

सिद्धू : (आश्चर्य से) चला गया ? शहर वापस चला गया ? अरे !

[माँ रो पड़ती है। स्टेज का प्रकाश एकाएक धूमिल होता हुआ खो जाता है। क्षण भर के बाद फिर एक क्षीण प्रकाश होता है, जिसमें हम देखते हैं कि शिवपाल सब बिखरे कपड़ों को बक्स में रख रहा है और क्रोध से कह रहा है—'जाने दो बेईमान को। जाए—चला गया तो क्या हुआ ? ईश्वर मालिक है। शादी उसके बिना थोड़े ही रुकेगी।' शेष लोग आश्चर्यपूर्ण दुःख से एक दूसरे को देखते रह जाते हैं और धीरे-धीरे पर्दा गिरता है।]

नमक और पानी

[जीवन-अवधि : फरवरी 1930 से दिसंबर 1931 तक]

पात्र

वाचक
देशी पत्रकार
सत्याग्रही
विदेशी पत्रकार
बापू
कैदी
वार्डन

[फेड्स इन—एकतारा बजाता हुआ एक कंठ का संगीत]

वैष्णव जन तो तेने कहिए, जे पीड़ पराई जाणे रे।
पर दुखे उपकार करे तोय मन अभिमान न आणे रे।
वैष्णव जन·····

देशी पत्रकार : (सहसा) हैं, यह तू क्या गा रहा है ?

सत्याग्रही : भजन·····

देशी पत्रकार : पर आप तो सत्याग्रही हैं।

सत्याग्रही : मैं सौराष्ट्र का एक किसान हूँ—वैष्णव परिवार का। बारदोली में गिरफ्तार होकर गांधी जी ने जब पहला इक्कीस दिन का उपवास व्रत तोड़ा था—सारा सौराष्ट्र उस दिन अंग्रेजी हुकूमत का शत्रु बनकर गांधी जी के सामने आया था—तब गांधी ने मुस्कराकर यही भजन-पंक्ति दुहराई थी। उस क्षण मुझे सत्याग्रही का असली अर्थ मिला। उसी दिन मैं गांधी जी को जान सका।

[उसी भजन का संगीत उभरकर फिर पृष्ठभूमि में चलेगा]

वाचक : प्रथम महायुद्ध के बाद से भारत का इतिहास गांधी के व्यक्तित्व का ही इतिहास है। 1920 से लेकर 1930 तक राष्ट्रीय क्षितिज पर इतनी तेज घटनाएं बादलों की तरह उमड़ती हैं कि उनके भीतर से गांधी को केवल एक ही शब्द में बाँधा जा सकता है—'सत्याग्रही'। गीता के कर्मपुरुष, रस्किन और तालस्ताय की नैतिकता, बाइबिल की दया, कुरान की कुर्बानी, रामायण के राम की मर्यादा—इन सारे तत्त्वों की सार-संगम-सत्याग्रही—यानी गांधी—1920 से लेकर 1930 तक के विशिष्ट गांधी। खिलाफत आन्दोलन से लेकर विदेशी कपड़ों की होली तक का हिन्दुस्तान, होमरूल से लेकर पूर्ण स्वाधीनता प्रस्ताव तक का राष्ट्रीय रोध, बारदोली से लेकर डांडी यात्रा तक का भारतवर्ष—इन सबके मूल में हैं वही अकेला सत्याग्रही—वही कालपुरुष गांधी।

[संगीत फेड्स अण्डर]

विदेशी पत्रकार : यह तुम्हारा गांधी साल्ट सत्याग्रह की बात क्यों करने लगा ?

सत्याग्रही : आप···आप कौन हैं ?

विदेशी पत्रकार : पत्रकार ! विदेश से आया हूँ—तुम्हारा स्ट्रगल देखने।

सत्याग्रही : अच्छा इसलिए ऐसा प्रश्न किया। दरअसल पूरे भारतवर्ष को जगाने के लिए कोई एक समान भाव चाहिए, और भाव वस्तु से जुड़ा होता है। 'नमक' एक ऐसी ही वस्तु है जिसका अनुभव सबको है, और इस अनुभव पर भी गुलामी की जंजीर बँधी है।

विदेशी पत्रकार : ओह, यह अजीबोगरीब 'फ्रीडम स्ट्रगल' है।

सत्याग्रही : हाँ, अजीबोगरीब है, तभी इस युद्ध को बापू ने सत्याग्रह कहा है और तभी यह युद्ध नमक जैसी बुनियादी चीज को लेकर शुरू हो रहा है। आप आइए—डांडी यात्रा शुरू हो रही है।

[अतुल स्वरों में 'भारतमाता की जय' डांडी यात्रा का कोलाहल सुपर इम्पोज—प्रयाण-गीत]

न एक हाथ शस्त्र हो
न एक हाथ अस्त्र हो
न अन्न, नीर वस्त्र हो
बढ़े चलो···बढ़े चलो

[जयजयकार—संगीत, प्रयाण-गीत सब मिल जाता है। यात्रा चल रही है।]

वाचक : (**सुपर इम्पोज**) यह है अमर डांडी यात्रा—आगे-आगे अकेले गांधी हैं—पीछे सौराष्ट्र के इतने लोग। नहीं, भूल हो रही है। यह भारतवर्ष के इतने लोग,··· नंगे···बूढ़े···बच्चे···स्त्री···। 12 मार्च, 1930 को सबेरे साढ़े छः बजे हैं। साबरमती आश्रम से गांधी जी के सेनापतित्व में नमक सत्याग्रह करने वाला यह पहला दल आगे बढ़ रहा है। गांधी जी को मिलाकर इस जन-समूह में प्रस्थान के समय 79 सत्याग्रही थे—पर उत्तरोत्तर सत्याग्रहियों की संख्या बढ़ती जा रही है।

[वही सम्मिलित जयजयकार, प्रयाण-गीत उभर कर छा जाता है।]

वाचक : गांधी के पीछे चलती हुई यह डांडी यात्रा—यह क्या है ? यह उमड़ता गाता हुआ जन-समूह सत्याग्रहियों का है या सैनिकों का ? वही यह विदेशी पत्रकार पूछता है।

विदेशी पत्रकार : है···है !

एक सत्याग्रही : क्या है ?

विदेशी पत्रकार : तुम सिपाही या सत्याग्रही ?

एक सत्याग्रही : सत्याग्रही।

विदेशी पत्रकार : पर तुम लोग सिपाही के माफिक मार्च कर रहा है और बर्तानिया सरकार का कानून तोड़ने जा रहा है।

एक सत्याग्रही : जो असत्य है, हिंसक है, उसे हम सत्य और अहिंसा के जरिये ही तोड़ेंगे···यही है हमारा सत्याग्रह···

[पृष्ठभूमि का स्वर पुनः छा जाता है]

वाचक : डांडी यात्रा बढ़ रही है। सूरज सबके माथे पर चमक रहा है। गांधी जी को छोड़कर सभी सत्याग्रहियों के सिर पर सफेद गांधी टोपी है। यही डांडी यात्रियों की एकमात्र समान पोशाक है। बाकी बातों में यात्रियों की विषमता का कोई ठिकाना नहीं है। हिंदुस्तान के प्रायः सारे प्रान्तों, हिस्सों के निवासी इस दल में हैं। वेश-भूषा में अधिक से अधिक विभिन्नता है, कुछ सफाचट मूँछ-दाढ़ी हैं, तो कुछ दाढ़ी-मूँछ वाले। कुछ ऐसे भी हैं, जो अभी किशोर हैं। कुछ सिख, कुछ बंगाली, कुछ दक्षिणी तो कुछ गुजराती, मराठी, सिंधी और अनेक हिन्दी-भाषी। कुछ वस्त्र पहने, कुछ अर्धनग्न, कोई बिल्कुल नंगे पैर—खुले बदन, पर सबके मुख में से समान गीत—समान जयजयकार फूट रहा है···

[गीत—जयजयकार का स्वर]

इनके चलने का ढंग भी अनोखा है। दो-दो सत्याग्रही के पीछे दो-दो सत्याग्रही। सेनापति गांधी बिना पीछे का ख्याल रखे बराबर तेजी से कदम बढ़ाए आगे चले जा रहे हैं। दोनों कंधों से दो छोटे-छोटे से थैले लटकाये, एक हल्की चादर ओढ़े, लुंगी कसे, चप्पलें पहने और उनके पीछे-पीछे उनका साथ देने की कोशिश में हाँफते-दौड़ते प्यारेलाल, छगनलाल जोशी आदि। साथ में झंडा वगैरह कुछ भी नहीं है।

[अपार मनुष्यों की भीड़ का कोलाहल—जयजयकार]

मनुष्यों की भीड़ बढ़ती जा रही है। सड़क के दोनों ओर दर्शनार्थी मेला लगाये खड़े हैं। साबरमती नदी के पुल पर इतनी जबरदस्त भीड़ की यात्रा नदी में से ही आगे बढ़ी।

[नदी में असंख्य मनुष्यों के चलने-पार करने का ध्वनि-प्रभाव]

एक सत्याग्रही : हम रोज कितनी दूर चलते हैं ?

दूसरा : ज्यादा से ज्यादा 10-12 मील चल पाते होंगे।

एक सत्याग्रही : इस तरह कब तक हम समुद्र तट पर पहुँच पायेंगे और नमक कानून भंग करेंगे ?

दूसरा : कल संध्या की सभा में गांधी जी ने कहा है कि यात्रा सोए हुए हिन्दुस्तान को जगाने की यात्रा है। इनका मतलब है···

बापू का स्वर : हमारी यह डांडी यात्रा स्वराज्य का प्रतीक है। नमक गरीबों के लिए भी उतना ही आवश्यक है जितना अमीरों के लिए, लेकिन पानी की तरह मुफ्त मिलने वाले इस पदार्थ पर कर लगाना कितना बड़ा अन्याय और अत्याचार है !

[जन-कोलाहल, संगीत, गीत]

वाचक : (सुपर इम्पोज) 31 दिसम्बर, 1929 की रात को बारह बजे लाहोर कांग्रेस ने 'स्वराज्य' शब्द का अर्थ लिया था—पूर्ण स्वतन्त्रता ! यह नई घोषणा 26 जनवरी, 1940 को देश के हर कोने में सुनायी गयी थी।

घोषणा : हम भारतीय प्रजाजन भी अन्य राष्ट्रों की भाँति अपना यह जन्म-सिद्ध अधिकार मानते हैं कि हम स्वतन्त्र होकर रहें, अपने परिश्रम का फल हम स्वयं भोगें और हमें जीवन-निर्वाह के लिए आवश्यक सुविधाएँ प्राप्त हों, जिससे हमें भी विकास का पूरा मौका मिले। भारत की अंग्रेजी सरकार ने भारतवासियों की स्वतन्त्रता का ही अपहरण नहीं किया, बल्कि उसका आधार गरीबों के रक्त-शोषण पर है और उसने आर्थिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक दृष्टि से भारतवर्ष का नाश किया है। अतएव हमारा विश्वास है कि भारतवर्ष का अंग्रेजों से संबंध-विच्छेद करके पूर्ण स्वराज्य पर स्वाधीनता प्राप्त कर लेनी चाहिए।

[उसी यात्रा का ध्वनि-प्रभाव उभरता है]

वाचक : उसी पूर्ण स्वतन्त्रता-बोध के लिए और उसकी प्रगति के हेतु पूरे भारत को जगाने के लिए गांधी ने नमक जैसे पदार्थ जो सबका है, सबके समाज उपयोग और भावना में बसने वाला पदार्थ है—इसके जरिये ही उन्होंने नवजागरण पैदा किया। उस महायात्रा में चलते हुए उन्होंने अपने देश-वासियों से कहा—

बापू का स्वर : अन्य देशों के लिए स्वतन्त्रता-प्राप्ति के दूसरे उपाय भले ही रहे हों, परन्तु भारतवर्ष के लिए अहिंसात्मक असहयोग के सिवा दूसरा मार्ग नहीं है। परमात्मा करे, कि आप लोग स्वराज्य के इस मंत्र को सिद्ध करें, और स्वाधीनता की जो लड़ाई निकट आ रही है, उसके लिए अपना सर्वस्व अर्पण करने का भी वह आपको बल और साहस प्रदान करें।

[यात्रा का ध्वनि-प्रभाव जाता है]

वाचक : आज डांडी यात्रा का आखिरी पड़ाव है। बापू, प्रार्थना-सभा में बैठे हैं। विशाल जन-समूह चारों ओर चुप बैठा है।

[फेड्स इन—सम्मिलित स्वर में गान]

वैष्णव जन तो तेने कहिए, जे पीड़ पराई जाणे रे।
पर दुखे उपकार करे तोये, मन अभिमान न आणे रे।
समदृष्टि न तृष्णा त्यागी, पर स्त्री जे ने मात रे।
जिह्वा थकी असत्य न बोले, पर धन नव झाले हाथ रे।

[फेड्स अण्डर]

यह लड़ाई अनोखी थी, इसका दर्शन अनोखा था। जमे हुए-से जोश के साथ जिज्ञासा का तूफान भी उठ रहा था। सत्याग्रही और पत्रकार सभी इस जिज्ञासा

के शिकार थे। बातचीत चला करती, चर्चाएँ होती रहती हैं—लोग कहते हैं, कुछ इस प्रकार की चर्चाएँ—प्रश्न और उत्तर···

एक सहयात्री : बापू जी, अखबारों में दिया है, कि आप नमक कानून भंग करने जा रहे हैं। पर आप तो अहिंसा के पुजारी हैं। क्या यह सही है ?

बापू का स्वर : मैं कैसे कहूँ कि यह बात सही है या गलत, मैं कहता हूँ कि मैं उस मानव अधिकार को प्राप्त करने के लिए उत्सुक हूँ, जिससे हमें वंचित कर दिया गया है। किसी के घर में कोई अन्यायपूर्वक ताला डाल दे। उस घर का मालिक अपने घर में पहले की तरह जाना और रहना चाहे तो क्या यह अनैतिक काम है ? कानून भंग तो उसने किया जिसने पहले अनधिकार दूसरे के घर को दखल कर लिया है और उसे अन्दर जाने से रोक रखा है, जिसका वह न्यायतः अधिकारी था !

देशी पत्रकार : बापू, यदि सरकार बल-प्रयोग करे तो क्या होगा ?

बापू का स्वर : गलत काम करने वाले को हमें शांतिपूर्वक समझाना होगा। कोई भी सरकार, जो कानून के द्वारा स्थापित हो, कानून भंग करती रहे तो वह टिक नहीं सकती।

वाचक : विदेशी पत्रकारों की नजर में···

विदेशी पत्रकार : एक्सक्यूज़ मी, यू आर गोइंग टु ब्रेक द साल्ट एक्ट, एंड ट्राइंग टु टेक ला इन्टु योर हैंड्स···।

बापू का स्वर : हम कानून भंग करने की कल्पना भी नहीं कर सकते। दरअसल वह कानून नहीं है, जो जनहित का विरोध करने के लिए जान बूझकर गढ़ा गया हो। ईश्वर के बनाए हुए कानून को गलत ठहराए जाने वाले जितने कानून बनाए गये हैं, वे टिक नहीं सकते। उन्हें जल्द से जल्द नष्ट कर देना हमारा जनमजात अधिकार है। हम आज एक ऐसे कानून का विरोध करने जा रहे हैं, जो ईश्वरीय कानून के विरोध में बनाया गया है।

[यात्रा शुरू होती। वही जयजयकार। वही यात्रियों का स्वर]

वाचक : अब सामने वही डांडी का समुद्र तट है। आज 6 अप्रैल, 1930 का दिन—नमक कानून को भंग करने का निश्चित दिन। इस महायात्रा के बारे में आचार्य प्रफुल्लचन्द्र ने कहा था—यह डांडी यात्रा की कूच हजरत मूसा की यात्रा की तरह सदा याद की जायेगी।

[समुद्र का ध्वनि-प्रभाव। मिश्रित जन-कोलाहल, संगीत]

एक स्त्री सत्याग्रही : सुनो···सुनो···सुनो, आज ठीक 6 बजे प्रातः हम सब समुद्र तट पर इकट्ठा होंगे। पहले गांधी जी नमक कानून भंग करेंगे, फिर हम सब लोग, फिर सारा भारतवर्ष···।

[भारत माता की जय, महात्मा गांधी की जय, तुमुलनाद-मिश्रित समुद्र का ध्वनि-प्रभाव]

वाचक : (सुपर इम्पोज) असंख्य जन-समूह समुद्र तट पर खड़ा है। हवा तेज बह रही है। समुद्र में आज एक विशेष ज्वार आया है। जैसेकि भारत की शत-शत जनता में। समुद्र की लहरें क्या हैं कि जैसे भारत के असंख्य हाथ हैं, जो इस महायज्ञ में ऊपर उठ रहे हैं। सबसे पहले गांधी केवल एक कोपीन पहनकर समुद्र में अकेले घुस रहे हैं।

[समुद्र का ध्वनि-प्रभाव—मिश्रित कोलाहल, जयजयकार और संगीत]

तीन-चार मिनट ही गांधी जी पानी से बाहर निकले। और अकेले उस ओर बढ़े जिधर एक स्थान पर समुद्र के किनारे के एक गड्ढे में थोड़ा-सा समुद्री पानी बिल्कुल नमक जैसा था।

[जयजयकार—जन-कोलाहल]

और ठीक साढ़े छः बजे गांधी ने एक पात्र में वह पानी उठाकर नमक कानून भंग कर दिया। लोग चारों ओर जयजयकार करते हुए—जहाँ-जहाँ पानी के सूख जाने से स्वाभाविक नमक बना पड़ा था, उसे उठाने लगे। ऐसा सारे दिन-भर होता रहा।

[जयजयकार—मिश्रित ध्वनि-प्रभाव]

पहला सत्याग्रही : यह पानी हिन्दुस्तान का है···यह हमारा है।
दूसरा सत्याग्रही : यह नमक हमारा है···हम इसके हैं।
स्त्री सत्याग्रही : भारतमाता की जय···।

[जयजयकार]

विदेशी पत्रकार : योरोप, अमेरिका की नजर में इस आन्दोलन का क्या इम्पोर्टेन्स है ?
बापू का स्वर : इसका उत्तर इतिहास देगा।
वाचक : ऐसे मौकों पर बापू अपनी अन्तरात्मा की ही आवाज सुना करते थे।
बापू का स्वर : मैं सदा यही जानने की चेष्टा करता हूँ कि मैं क्या करता हूँ, मैं क्या सोचता हूँ, बस···
विदेशी पत्रकार : यदि इस आन्दोलन का भी वह फेट हुआ जो नान-कोआपरेशन का चोरी-चोरी कांड के कारण हुआ, तो क्या इसे भी रोक दिया जायेगा ?
बापू का स्वर : प्रेरक तो भगवान हैं। यदि हम सत्य-पथ पर निश्चयपूर्वक श्रद्धा से आगे बढ़ते गये तो कोई कारण नहीं कि बीच में कोई बाधा उपस्थित हो।

[जयजयकार—ध्वनि-प्रभाव]

विदेशी पत्रकार : ओह प्लीज़ सुनिए, आप इस देश के पत्रकार हैं, हम को काइंडली यह समझाइए कि कट्टी में इतना फेथ और कान्फीडेंस इस आन्दोलन में कहाँ से, कैसे आया ?

देशी पत्रकार : इस फेथ और कान्फीडेंस के पीछे इस देश की कुर्बानियाँ हैं, गोखले, तिलक, गांधी का चरित्र है।

विदेशी पत्रकार : पर इमिजिएट काज़ क्या था ?

देशी पत्रकार : इमिजिएट काज···सुनिए···बारदोली सत्याग्रह···कलकत्ता कांग्रेस···

विदेशी पत्रकार : प्लीज़, वेट···मैं आपका मतलब नहीं समझा···

देशी पत्रकार : मतलब देश में जो घटनाएँ घट रही हैं। वह गांधी···

स्त्री सत्याग्रही : (सहसा) माफ कीजिए, इस महायज्ञ का रहस्य पत्रकारों द्वारा नहीं जाना जा सकता। यह घटना से ज्यादा तपस्या है, सत्य का यह आग्रह है।

विदेशी पत्रकार : फिर भी सिस्टर तुम बोली हमसे···।

स्त्री सत्याग्रही : जो सत्याग्रह आन्दोलन आज चल रहा है मुठभेड़ है उस विदेसी हुकूमत से···उस ताकत से जो मनुष्य की आजादी का अर्थ नहीं समझ पा रही है। 1920 का संघर्ष इसी आन्दोलन की तैयारी थी।

विदेशी पत्रकार : ओह, फैन्टास्टिक।

देशी पत्रकार : आज हिन्दुस्तान का हर सत्याग्रही जैसे स्वयं एक समाचार-पत्र हो गया है।

[वही समुद्र तथा जन-कोलाहल का ध्वनि-प्रभाव छा जाता है]

वाचक : (सुपर इम्पोज़) बापू का ख्याल था कि अगर डांडी पहुँचने के पहले ही नहीं तो कम से कम वहाँ पहुँचने और नमक कानून भंग करने के बाद तो अवश्य ही वे गिरफ्तार कर लिए जायेंगे। पर ऐसा नहीं हुआ समुद्र किनारे का पानी सूखने के बाद तैयार हुए नमक को लोग रोज खाँचियों में भर-भर कर अपने पड़ाव पर लाते, जहाँ अब तक नमक का एक अच्छा खासा पहाड़-सा खड़ा हो गया है।

[फेड इन—कुछ लोगों के संवाद]

स्त्री स्वर : हम यहाँ कितना नमक इकट्ठा करेंगे ?

पुरुष स्वर : उतना नमक, जितना सारा भारतवर्ष चाहेगा।

स्त्री स्वर : कितना चाहेगा ?

पुरुष स्वर : जितना उसमें पानी सूख गया है। जितना उस पानी का शोषण इन अंग्रेजों ने किया है।

स्त्री स्वर : सारे देश में लोग नमक बना रहे हैं।

पुरुष स्वर : वे लोग गिरफ्तार हो-होकर जेल जा रहे हैं।

स्त्री स्वर : हमें क्यों नहीं गिरफ्तार किया ?

पुरुष स्वर : बोलो भारत माता की···

[जयजयकार गूँजता है]

वाचक : सारे देश में नमक कानून भंग करने वालों पर तरह-तरह के अत्याचार हो रहे थे पर यहाँ समुद्र के किनारे नमक का पहाड़ नित्य ऊँचा ही होता जा रहा था।

बापू ने एक दिन नमक का वह पहाड़ देखा तो उसे भी तोड़ने का हुक्म दे दिया।

बापू का स्वर : नमक कानून भंग करना हमारा उद्देश्य नहीं है, बल्कि इस नमक को सारे हिन्दुस्तान में बाँट देना है।

[जयजयकार गूँजता है, लोग गाते हुए समुद्र तट से दूर जा रहे हैं]

मेरी जां न रहे मेरा सर न रहे, सामां न रहे न ये साज रहे।
फकत हिन्द मेरा आज़ाद रहे, मेरी माता के सर पर ताज रहे॥

[कारवाँ गाता हुआ बढ़ रहा है]

वाचक : सारे सत्याग्रही नमक बाँधे हुए गाँवों में लौट रहे हैं और सबको आज़ादी का पाठ पढ़ा रहे हैं। यह नमक आज़ादी का प्रतीक बन गया··· वही मूक संदेश—ठीक जैसे 1957 की क्रान्ति में 'रोटी और कमल' आज़ादी का प्रतीक और क्रान्ति का मूक संदेश था। देखते ही देखते सारे देश में नमक का यह जादू फैल गया। हजारों वर्षों से सोयी हुई भारतीय जनता की आँखों का पानी लौट आया हो। पूरे देश में आजादी की लहर फैल गयी और बहुत बड़ी संख्या में लोग गिरफ्तार किए जाने लगे। सरकार के हर जेलखाने में सत्याग्रही भरे थे। साबरमती जेल के दो सत्याग्रही सजा भुगत रहे थे, पर उनका विचार कैसा था···

[फेड इन जेल का घंटा। कैदियों को आर्डर देकर, सीटी बजाकर चुप रहने का आदेश दिया जा रहा है, पर कैदी 'भारत माता की जय' तथा 'महात्मा गांधी की जय' के नारे लगा रहे हैं। फायर होता है।]

एक कैदी : कितनी भी गोली क्यों न चलाओ, हम भारत माँ को तुमसे आज़ाद करके ही रहेंगे।

दूसरा कैदी : (गाते हुए) सर पे बाँधे कफनिया हो, शहीदों की टोली निकली···

वार्डन : है! जेल के सुपरिन्टेंडेंट का आर्डर है कि तुम इन कमरों की सफाई करो। चलो, हमारा मुँह क्या देखते हो?

एक कैदी : कमरे की सफाई। क्यों?

वार्डन : सवाल-जवाब करता है—गोली से उड़ा दिया जायेगा।

दूसरा कैदी : (हँसता है) आओ, चलाओ गोली।

वार्डन : तो तुम जेलर का हुक्म अदूली करेगा।

दोनों कैदी : हम सत्याग्रही हैं। हम अन्याय के सामने घुटने नहीं टेकते।

[सलूट की आवाज]

दूसरा अफसर : क्या है **वार्डन** है?

वार्डन : हुजूर, ये सत्याग्रही आर्डर नहीं मानते। ये कहते हैं, हम कमरे की सफाई नहीं करेंगे।

अफसर : तुमने इनसे क्या कहा ?

वार्डन : कमरे की सफाई का आर्डर दिया है।

अफसर : फुलिश···इनसे बोलो···गांधी जी इस जेलखाने में लाए जा रहे हैं—बंदी बनाकर···।

वार्डन : जी सरकार। (सलूट)

वार्डन : सुनो, गांधी जी गिरफ्तार करके इसी जेलखाने में लाए जा रहे हैं, तुम्हें इन कमरों की सफाई करनी है ?

दोनों कैदी : (प्रसन्नता से) ओ हो, तब तो हम पूरे जेलखाने की सफाई करेंगे, ले आओ—फावड़ा, झाड़ू, कुदाल, पानी ले आओ···

वाचक : साबरमती के जेलखाने के कमरे सत्याग्रहियों द्वारा इस तरह साफ किये जाने लगे, जैसे भगत अपना मंदिर साफ करते हैं। यह अस्त्र गांधी जी का देश-भर में फैलने लगा—व्यक्ति पर, वर्ग पर, समाज और संस्थाओं पर। लोगों के मन से डर निकल गया।

[जेल का घंटा-प्रभाव]

एक कैदी : हमारे बापू जी इस जेल में आएँगे और यह सारा जेल मंदिर हो जाएगा।

दूसरा कैदी : भला, ये अंग्रेज ऐसे सत्य पुरुष को जेल में क्यों बन्द करते हैं? बापू तो किसी की हानि नहीं करते···किसी को दुख नहीं पहुँचाते।

पहला कैदी : ये अंग्रेज भी खूब है। ये तो चाहते ही हैं कि सब कोई दुखी रहें। सुना है, लाखों स्त्री-पुरुषों को इन्होंने जेल में भर दिया है। इनका यही दोष है कि वे सत्याग्रही···

वार्डन : हैं ! बात बहुत करता है···जल्दी-जल्दी काम खतम करो।

एक कैदी : साहब !

वार्डन : क्या है ?

दूसरा कैदी : बोलिए भारत माता की जय।

वार्डन : चुप रहता है कि नहीं।

दूसरा कैदी : साहब, बापू यहाँ कब आयेंगे ?

वार्डन : पता नहीं।

दूसरा कैदी : साहब, अखबार ज़रा हमको भी पढ़ा दीजिए···हम सब कमरे खूब साफ कर रहे हैं···आप बेफिकर रहिए···।

वार्डन : अच्छा काम करते हो···मैं अखबार के कुछ हैडिंग पढ़कर सुनाता हूँ···पर क्या सुनाऊँ, चारों ओर वही सत्याग्रह, वही दमन, वही एक कैफियत···।

पहला कैदी : साहब, कुछ सुनाइए।

वार्डन : गांधी जी ने वायसराय लार्ड अर्विन को जो चिट्ठी भेजी है वह छपी है।

दोनों : ज़रा पढ़ दीजिए···हम आपकी सारी बातें मानेंगे।

वार्डन : चिट्ठी लम्बी है, मैं बीच-बीच से थोड़ा-सा ही पढ़ूंगा।

दोनों : सुनाइए।

वार्डन : जहाँ मैं ब्रिटिश राज्य को अभिशाप समझता हूँ, वहाँ।

बापू का स्वर : मैं एक भी अंग्रेज या भारत में उसके किसी भी स्वार्थ को नुकसान नहीं पहुँचाना चाहता···राजनीतिक दृष्टि से हमारी स्थिति गुलाम से अच्छी नहीं है। हमारी संस्कृति की जड़ ही खोखली कर दी गयी है, दिल्ली की मुलाकात आपसे निष्फल सिद्ध होने पर मेरे और मोतीलाल नेहरू के लिए 1928 की कलकत्ता कांग्रेस के गंभीर निश्चय पर अमल करने के सिवा दूसरा चारा ही नहीं था···।

पहला कैदी : और सुनाइए न हुजूर···।

दूसरा कैदी : अच्छा हम कमरे की सफाई करते हैं, आप पत्र और सुना दीजिए।

[कमरे में झाड़ू-पोंछा लगता रहता है]

वार्डन : (**सुपर इम्पोज़**) दिवाकर की भाँति अब साफ-साफ जाहिर हो गया है कि जिम्मेदार ब्रिटिश राजनीतिज्ञ अपनी नीति में ऐसा कोई परिवर्तन नहीं करना चाहते जिससे भारतीय जनता का शोषण बन्द हो।

बापू का स्वर : सविनय अवज्ञा इन्हीं बुराइयों के मुकाबले में है—इस पत्र का हेतु धमकी नहीं है। यह तो सत्याग्रही का साधारण और पवित्र कर्त्तव्य मात्र है।

[दोनों कैदी जयजयकार कर उठते हैं—'भारत माता की जय···गांधी जी की जय' वार्डन चुप होने की आज्ञा देता है। दोनों की जयजयकार बढ़ती है। जेल की सीटियाँ बजती हैं।]

वाचक : गांधी की इस चिट्ठी को रेनाल्ड नामक एक अंग्रेज युवक दिल्ली से वाइसराय लार्ड इर्विन के पास ले गये थे। गांधी जी के इस पत्र को देश की जनता और अखबारों ने 'अंतिम चेतावनी' का नाम दिया था। पर लार्ड इर्विन का उत्तर भी साफ था, दूसरे ही दिन अखबारों में यह छपा था···।

[अखबार बेचने वाले की आवाज़]

आवाज़ : आ गया, आ गया। आज का ताजा समाचार—गांधी जी को वाइसराय ने उत्तर दिया है कि गांधी जी ऐसा काम करने वाले हैं, जो निश्चित रूप से कानून के खिलाफ है—आ गया, आ गया आज का समाचार।

वाचक : इसके उत्तर में गांधी जी ने कहा वह एक सच्चे सत्याग्रही के एकमात्र कवच, विनय, साहस की भावना से ओत-प्रोत था। गांधी जी ने प्रार्थना सभा में कहा—

[प्रार्थना सभा का ध्वनिप्रभाव—उस पर सुपर इम्पोज़ गांधी संवाद का अभिनय]

बापू का स्वर : मैंने दस्तबस्ता रोटी का सवाल किया था वाइसराय महोदय से और इसके उत्तर में मिला मुझे पत्थर···।

वाचक : यह कितना सच है :

रहम की तुझको तवक्को थी, सितमगर निकला,
मोम समझे थे तेरे दिल को, सो पत्थर निकला।

बात भी साफ हो गई। हर हिन्दुस्तानी धीरे-धीरे समझने लगाकि अंग्रेज़ जाति सिर्फ शक्ति का ही प्रोत्साह मानती है, इसलिए लोगों को आश्चर्य नहीं होता। सारा भारत उस समय एक विशाल कारागृह था। इसलिए गांधी जी ने 4 मई, 1930 को यरवदा जेल में जाने से पहले संदेश में कहा था—

बापू का स्वर : मैं इस अंग्रेजी कानून को मानने से इन्कार करता हूँ, और इस जबरदस्ती की शान्ति की मनहूस एकरसता को भंग करना अपना पवित्र काम मानता हूँ। इस शान्ति से राष्ट्र का गला रुंधा हुआ है। अब इसके हृदय का चीत्कार प्रकट होना चाहिए।

सुपर इम्पोज़ : हृदय का चीत्कार ही दांडी कूच में साकार था—सरदार वल्लभभाई पटेल, सेनगुप्ता की गिरफ्तारी हुई—देश में लाखों लोगों को जेल में ठूँस दिया गया—लोग सरकारी नौकरियों से इस्तीफा दे-देकर सत्याग्रह में टूटने लगे। लोग एक-एक कर सत्याग्रह की प्रतिज्ञाएँ लेते लगे।

[नीचे का भाग एक-एक स्वर में उठेगा। पृष्ठभूमि में घना संगीत और बिगुल-ध्वनि]

एक स्वर : मैं प्रतिज्ञा करता हूँ कि राष्ट्रीय महासभा ने भारतीय स्वाधीनता के लिए सविनय अवज्ञा का जो आंदोलन खड़ा किया है, उसमें मैं तन, मन, धन से शामिल होना चाहता हूँ।

दूसरा स्त्री स्वर : मैं कांग्रेस के शांत एवं उचित उपायों से भारत के लिए पूर्ण स्वराज्य की प्राप्ति के ध्येय को स्वीकार करती हूँ।

तीसरा स्वर : मैं जेल जाने को तैयार हूँ और इस आन्दोलन में और भी जो कष्ट और सजाएँ मुझे दी जायेंगी, उनको सहर्ष सहन करूँगा।

चौथा स्वर : जेल जाने की हालत में मैं कांग्रेस कोष से अपने परिवार-निर्वाह के लिए कोई आर्थिक सहायता नहीं मागूंगा।

पांचवां स्वर : मैं आन्दोलनों के संचालकों की आज्ञाओं का निर्विवाद रूप से पालन करूंगा।

[संगीत और बिगुल-ध्वनि उठकर चारों ओर छा जाती है। धीरे-धीरे फेड-आउट।]

वाचक : आंदोलन बढ़ने लगा। ब्रिटिश राज्य के विरोध में भारत ने रक्त रहित विद्रोह का झंडा फहरा दिया और जन-जन का विश्वास मजबूत होने लगा कि असत्य पर सत्य की, अंधकार पर रोशनी की, मृत्यु पर अमरता की विजय होनी चाहिए, तो भारत की भी जीत होकर ही रहेगी।

[जन-कोलाहल—जयजयकार]

गांधी जी के गिरफ्तार होने पर जनता क्या करे, इस विषय पर गांधी जी सदा निर्देश देते रहे हैं—इस बार उनका निर्देश बेहद ही जानकार था···।

बापू का स्वर : इस बार मेरी गिरफ्तारी के बाद मूक और निष्क्रिय अहिंसा की जरूरत नहीं है, आवश्यकता है अत्यन्त सक्रिय अहिंसा को कार्यरूप देने की। पूर्ण स्वराज्य प्राप्ति के लिए अहिंसा में धार्मिक विश्वास करने वाला एक-एक स्त्री-पुरुष इस गुलामी में अब नहीं रहेगा, हर सत्याग्रही या तो मर मिटेगा या कारावास में बंद रहेगा। हर सत्याग्रही इन तीनों बातों में से किसी एक अवस्था में रहेगा—कारावास या ऐसी अन्य स्थिति में। सविनय अवज्ञा में लगा हुआ। सरदार (पटेल) की आज्ञा से स्वराज्य को निकट लाने वाले कताई आदि किसी रचनात्मक काम में।

[फेड इन—जन-कोलाहल, जयजयकार, गीत, बिगुल।]

वाचक : प्रत्येक युग और प्रत्येक देश में चमत्कार होते आए हैं। तीस-इकत्तीस के भारत को भी अपना चमत्कार दिखाना ही था। उसी चमत्कार को, उसी जादू को देखने के लिए कहीं साबरमती आश्रम में, कहीं यरवदा जेल में और कहीं बारदोली के कैदखाने में चारों ओर हजारों नर-नारी, देश-विदेश के पत्रकार घिर रहे थे।

[जन-कोलाहल, गीत-संगीत, सुपर इम्पोज़।]

देशी पत्रकार : ओ मिस्टर ! आपके यहाँ अखबारों में क्या हो रहा है ?

विदेशी पत्रकार : सब झूठ—एकदम 'लाई' छप रहा है ! मैं यहाँ से जो न्यूज़ डिस्पैच करता हूँ, उसका ठीक उल्टा हमारे देश में छप रहा है।

देशी पत्रकार : यह देखिए 'बाम्बे क्रानिकल' का यह एडीटोरियल···।

एक स्वर : हे भाई, अखबार में क्या छपा है ?

दूसरा स्वर : सुनाओ भाई···

[कई स्वर—सुनाओ, सुनाओ।]

देशी पत्रकार : मैं सम्पादकीय पढ़ रहा हूँ—आज गांधी आन्दोलन महान राष्ट्रीय घटना हो रही है। चारों ओर सत्याग्रह के इतने उत्साहपूर्ण शानदार और जीवंत दृश्य देखने को मिलते हैं कि उन्हें कभी नहीं भुलाया जा सकता।

[जयजयकार की ध्वनि।]

विदेशी पत्रकार : मैंने 'मेनी टाइम्स गाड सेव द किंग' के गीत गाए हैं, बट जो गीत हिन्दुस्तान का पब्लिक गाता है—वह जादू माफिक है।

[फेड्स इन]

अखबार बेचनेवाला : आ गया···आ गया···आज का ताजा समाचार आ गया। आ गया, सुनो भाइयो सुनो···लो पढ़ो खून में लिखी हुई आज़ादी की कहानी—

करांची, पूना, पेशावर, कलकत्ता, मद्रास, श्रीलम्पुर में विराट सभाएँ—सविनय अवज्ञा, पेशावर में सेना की गोलियों से कई सत्याग्रही मारे गए···मद्रास में गोली चली···बहादुर युवक दत्तात्रेय को फाँसी मिली—18 साल का मेघराज गोली का शिकार हुआ—सुनो, सुनो।

[मनुष्यों की बोलचाल उठती है। फेड्स आउट।]

वाचक : और इसी अनुपात में ब्रिटिश राज्य तानाशाही पर उतर चुकी थी। उसने 23 अप्रैल को बंगाल आर्डिनेंस फिर जारी कर दिया। 27 अप्रैल को वाइसराय ने कुछ संशोधन करके 1910 के प्रेस एक्ट को आर्डिनेंस रूप में फिर से जीवित कर दिया। गांधी जी का 'यंग इंडिया' साइक्लोस्टाइल पर निकलने लगा था। एक वक्तव्य में उन्होंने कहा था—

बापू का स्वर : हमें अनुभव होता हो या न होता हो, कुछ दिन से हम पर एक प्रकार से फौजी शासन हो रहा है। फौजी शासन आखिर है क्या? यही कि सैनिक अफसर की मर्जी ही कानून बन जाए। पर मैं अनुभव करता हूँ, वे दिन जाते रहे कि अंग्रेज शासकों के आगे हम सिर झुकायें—मुझे उम्मीद है जनता इस आर्डिनेंस से भयभीत न होगी। 'थोरो' का यह उपदेश हमें याद रखना है कि अत्याचारी शासन में ईमानदार आदमी का धनवान रहना कठिन है।'

[फेड्स इन—प्रेस मशीन की ध्वनि।]

एक अफसर : यही है वह नवजीवन प्रेस?

एक स्त्री स्वर : महात्मा गांधी की जय!

कई पुरुष स्वर : भारत माता की जय।

अफसर : बंद करो यह प्रेस, (**मशीन बंद**) सरकार इसे जब्त करती है।

[जयजयकार होता है—दूर जाता है।]

वाचक : पर सारे देश के हृदय में जो आजादी का प्रेस चल रहा था—उस मानसिक जगत के छापेखाने को कौन जब्त करता। 'नवजीवन' अब साइक्लोस्टाइल रूप में निकलने लगा। गांधी ने सत्याग्रह संग्राम को विस्तृत किया—और व्यापक बनाया पर उसकी गहराई और बढ़ती गई। गाँवों में ताड़ी के पेड़ों को काट डालने का आह्वान किया—विदेशी कपड़ों की होलियाँ जलाई जाने लगीं। शराब की दूकान पर धरना दिया जाने लगा! गुजरात का खेड़ा जिला रणांगण बन गया। गांधी जी सूरत में 30 मई को स्त्रियों की बहुत बड़ी सभा में बोले—

बापू का स्वर : भविष्य में आपको तकली के बिना सभाओं में नहीं जाना चाहिए। तकली पर आप बारीक से बारीक सूत कात सकती हैं। विदेशी कपड़ा पहले सूरत के बन्दरगाह पर उतरा है—सूरत की बहनों को ही इसका प्रायश्चित करना है।

[स्त्रियों का जयजयकार, समूह-गान, वन्दे मातरम्।]

वाचक : इसी समय गांधी ने वाइसराय के लिए अपना दूसरा पत्र तैयार किया, और सूरत जिले के धारासन और बरसाड़ा के नमक के कारखानों पर धावा बोलने का इरादा जाहिर किया। उन्होंने वाइसराय को लिखा—

बापू का स्वर : ईश्वर ने चाहा तो धारासना पहुँचकर नमक के कारखाने पर मेरा अधिकार करने का इरादा है। इस धावे को रोकने के तीन उपाय हैं—नमक कर उठा देना, मुझे और मेरे साथियों को गिरफ्तार कर लेना···खालिश गुंडापन।

वाचक : इसके उत्तर में 5 मई, 1930 को रात में एक बजकर 10 मिनट पर गांधी जी को चुपके से गिरफ्तार कर लिया गया। वे एक मोटर लारी में बिठा दिए गए··· गाड़ी चली···बम्बई के पास बोरीवली तक रेलगाड़ी में ले जाए गए। **(संगीत से विराम)**

वाचक : जयजयकार बढ़ता गया···बोरीवली से फिर मोटर में और वहाँ से यरवदा जेल में।

[जयजयकार गूंजकर दूर जाती है।]

वार्डन : हे कैदी लोग ! जेल में किसी ने अगर गांधी की जयजयकार की तो उसे सौ कोड़े पड़ेंगे।

एक कैदी : हम कैदी नहीं हैं सत्याग्रही हैं।

वार्डन : कानून तोड़ करके तो आया है, बोलता है सत्याग्रही।

दूसरा कैदी : नमक पानी के अधिकार के लिए जो भी करना पड़े, करेंगे।

वार्डन : अबे मूरख यह गांधी का सत्याग्रह नहीं है। यह देख अखबार में उनका बयान निकला है। सुनो···इस आंदोलन का संचालक मैं नहीं परमात्मा है। वही सबके हृदय में निवास करता है। हममें श्रद्धा होगी तो हमें अवश्य विजय मिलेगी।

एक अंग्रेज : (सहसा) यू वार्डन···फूल, इडियट···तुम इस माफिक कैदियों को अखबार पढ़ाकर बगावत करता है ! सिपाही—इसे एरेस्ट करो।

[एरेस्ट किया जाता है—'भारतमाता की जय' के स्वर उठते हैं।]

वाचक : क्या जेल, क्या कल-कारखाने, सड़क, मार्ग, गाँव, शहर, घर-बाहर—इस तरह की घटनाएँ एक आम बात हो गई थी। हर कोई भारत माता की आजादी में गिरफ्तार हो अपने को पवित्र करना चाहता था···

अखबारवाला : आ गया···आ···गया, आज का ताजा समाचार···महात्मा गांधी के स्थान पर श्री अब्बास तैयब जी सत्याग्रह के नायक···वे भी रात को गिरफ्तार··· सुनिए···सुनिए ताजे समाचार···कार्य समिति की बैठक इलाहाबाद में···15 प्रस्ताव पास···देश भर में अब 'बहिष्कार आंदोलन शुरू'···देश की राजनीतिक दशा बड़ी तेजी से उग्र होती गयी। बहिष्कार आंदोलन अपनी चरम सीमा पर था। 29 मई को धारासना पर सामूहिक धावा हुआ। वड़ाला के नमक कारखाने पर कई धावे हुए। वर्ली की जेल में स्वयंसेवकों ने जबरदस्त सत्याग्रह किया। देश भर

में इस तरह की घटनाओं की कोई गिनती न थी। लार्ड इर्विन ने अपनी सत्ता का पेच पूरा कस दिया था। चारों ओर दमन का दौरदौरा था। धड़ाधड़ एक दर्जन के करीब आर्डिनेंस निकले, जिनमें उल्लेखनीय हैं—गैरकानूनी उत्तेजन, गैरकानूनी संस्था। अर्थात एक ओर था पूरे भारतवर्ष से सविनय अवज्ञा आंदोलन और दूसरी ओर थे आर्डिनेंस बंदूक, जेल, फांसी। एक ओर था चालीस करोड़ भारतवासियों को गुलाम बनाए रखना और उनका शोषण, और दूसरी ओर था देश के नमक-पानी के लिए अपनी जान दे देने की आस्था।

[फेड्स इन—जन-कोलाहल, सत्याग्रहियों की यात्राएँ।]

(राष्ट्रीय गान)

करवटें बदल रहा है आज सब जहान
रंग बदलते जा रहे हैं, धरती-आसमान
नौजवान···नौजवान।
अब न रोके से रुकेगी जिन्दगी की राह
अब नहीं रुकेंगे जहाँ रुकती है निगाह
आजादी···आजादी एक ही निशान
नौजवान···नौजवान।

वाचक : ऐसे ही क्षुब्ध वातावरण में भारत की आज़ादी के सवाल को लेकर इंग्लैण्ड में 12 नवम्बर, 1930 को गोलमेज़ परिषद की बैठक शुरू हुई। अपर हाउस की शाही गैलरी से बड़ी शान के साथ इसका उद्घाटन हुआ पर इसमें प्रकाश न था, वह प्रकाश···वह बापू··· वह गांधी यरवदा जेल के कमरे में अकेले बैठा हुआ आत्मा के सत्य पर विश्वास कर रहा था।

[फेड्स इन—संस्कृत श्लोक।]

सत्यमेव जयते नानृतं।
सत्येन पंथा विनतो देवयानः
येना क्रमन्त्यृषयो ह्याप्तकामा
यत्र तत्सत्यस्य परमं निधानम्॥

वाचक : (सुपर इम्पोज़) सत्य की जय होती है, असत्य की नहीं···देवों का वह मार्ग हमारे लिए सत्य के द्वारा ही खुलता है। 25 जनवरी, 1931 को गांधी जी जेल से मुक्त किए गए। जेल से बाहर आते ही उन्होंने भारतीय जनता के नाम संदेश दिया—

बापू का स्वर : मैं मुक्त हृदय और सहज मन से बाहर आया हूँ। मुझे किसी से न घृणा है न बैर, मैं हर स्थिति को फिर से जानना-समझना चाहता हूँ। राउण्ड टेबुल कान्फ्रेंस में जो कुछ हुआ है, या नहीं हुआ है, मैं उसके परिणामों से उसे जानूंगा—जैसे वृक्ष की पहचान उसके फल से होती है।

वाचक : पर उसके बाद ही एक करुण घटना घटी। गांधी जी के अनन्य साथी देश के एक बड़े स्तम्भ पंडित मोतीलाल नेहरू का स्वर्गवास जिन्होंने मृत्युशैया पर बापू से कहा था—'मुझे आज़ाद भारत माता की गोद में मरने का सौभाग्य मिलता ! ···पर ऐसा नहीं हुआ। उसके लिए अभी एक लम्बी लड़ाई लड़नी शेष थी। एक लड़ाई वार्ता के स्तर पर हो रही थी। दूसरी सत्याग्रह के स्तर पर। गांधी-इर्विन कर्ता एक ऐसी ही लड़ाई थी। 5 मार्च को गांधी-इर्विन समझौता के नाम से 21 धाराओं वाली एक विज्ञप्ति प्रकाशित हुई। इन धाराओं पर जनता जब तक सोच-विचार करती, उसी बीच भगत सिंह, राजगुरु और सुखदेव को लाहौर जेल में फाँसी दे दी गई और सारा देश शोक में डूब गया।

[करुण संगीत। 'सर पे बाँधे कफनिया हो, शहीदों की टोली निकली' का समूह गायन। कोलाहल।]

विदेशी पत्रकार : एसक्यूज़ मी, मैं कुछ समझ नहीं सका कि महात्मा गांधी ने भगतसिंह, राजगुरु, और सुखदेव जैसे लोगों को क्यों नहीं बचाया ?

देशी पत्रकार : कैसे बचाते ? उन्होंने अपराध ही ऐसे किए थे···!

विदेशी पत्रकार : पर वे अपराध आज़ादी के लिए किए थे···! द वेयर नाट क्रिमिनल्स इन द रीयल सेंस आफ टर्म्स···!

देशी पत्रकार : आप बात नहीं समझते···।

विदेशी पत्रकार : (हँसता है) यस···यस···मैं नहीं समझता और मुझे यह 'इमेजिन' करके हँसी आती है कि गांधी ने उनको बचाने की भी कोशिश नहीं की।

देशी पत्रकार : गांधी सत्याग्रही थे।

विदेशी पत्रकार : भगतसिंह, राजगुरु और सुखदेव भी सत्याग्रही थे। वे भी भारत माता की आज़ादी के लिए ही।··वे गांधी से कहीं ज्यादा शिवेल्रस थे।

देशी पत्रकार : गांधी का सत्याग्रह मनुष्य की नैतिकता, शौर्य, विश्वास और उसकी अहिंसा से बना था।

विदेशी पत्रकार : (हँसता है) उनका इस माफिक फाँसी पर झूल जाना क्या तुम्हारे गांधी के लिए हिंसा नहीं है ?

वाचक : गांधी के सत्याग्रह में दुश्मन के लिए भी वही अहिंसा का भाव था। सत्य की इस सूली पर गांधी निर्विकार भाव से चढ़े थे। इस बार ही नहीं, कई बार···कई जगह बाहर से देखने पर। यहाँ गांधी निर्भय लगते हैं, पर गांधी इस युद्ध में केवल सत्याग्रही से—भगतसिंह, राजगुरु, सुखदेव की फाँसी की प्रतिक्रिया पूरे हिन्दुस्तान में तरह-तरह से हुई।

[कोलाहल, सुपर इम्पोज़। विविध स्वर।]

एक स्त्री स्वर : गांधी के सत्याग्रह में इस तरह के शहीदों की कोई जगह नहीं है। (रो पड़ती है) मैं ऐसा नहीं मानती—गांधी का कोई सगा बेटा इस तरह फाँसी

पर चढ़ा दिया गया होता तो···

पुरुष सत्याग्रही : हम इसका बदला लेंगे···।

दूसरा सत्याग्रही : हम जलाकर रख देंगे !

[कोलाहल, मारना-पीटना, चीख-पुकार ।]

वाचक : इसकी अजब-अजब प्रतिक्रिया हुई । कलकत्ते में जनता और पुलिस की लड़ाई हुई । कानपुर में साम्प्रदायिक दंगे हुए और इस आग में बलि चढ़ी गणेशशंकर विद्यार्थी की । राम मर्यादावादी थे—आदर्श और सिद्धांत की जलती रेखाओं ने उन्हें बाँध रखा था, फिर भी···

[चौपाई उचारता है—]

धर्म हेतु अवतरेहु गोसाईं । मोहि व्याध की नाईं ।।
मैं बैरी सुग्रीव पियारा । अवगुन कवन नाथ मोहि मारा ।।

आलोचना हुई, हो रही है । महापुरुषों के जीवन-दर्शन को समझना भी तो एक साधना ही है । शम्बूक-बध के पीछे का आदर्श उस युग की ध्वनि बेशक थी, किन्तु राम की आलोचना आज भी होती है । होती रहेगी ।

[श्लोक उचारता है—]

न मिथ्याहं वदे राम देवलोक जिगिषया ।
शूद्रं मां विद्धि काकुत्स्थ शम्बूकं नाम नामतः ।।
भाषतस्तस्य शूद्रस्य खगं सुरुचिर प्रभम् ।
निष्कृष्य कौशाद् विमलं शिरश्चिच्छेद राघवः ।।

(श्रीमद्वाल्मीकीय रामायण, उत्तरकाण्ड, छिहत्तरवाँ सर्ग)

[पृष्ठभूमि का शोर समाप्त ।]

एक स्वर : (अखबारवाला) आ गया···आज का ताजा समाचार 'यंग इंडिया' में छप गया···गांधी इंग्लैंड जायेंगे, इस आशय का खत वाइसराय को···।

[लोगों की बातचीत । सुपर इम्पोज संगीत ।]

वाचक : आशा-निराशा के बादलों के बीच गांधी भारत की आजादी के अग्रदूत के रूप में लंदन रवाना हुए । लंदन पहुँच कर गोलमेज परिषद में आए हुए प्रतिनिधियों से गांधी ने बात की । प्राइम मिनिस्टर से भेंट हुई···जनरल इस्टमस आकर बापू से मिले···लार्ड इर्विन से इनकी भेंट हुई और सारी भेंटों, वार्ताओं से गांधी ने केवल एक ही सत्य को उजागर किया—भारत की पूर्ण स्वतंत्रता ।

[फेड्स इन—अतुल कोलाहल । गांधी की जयजयकार, भारत माता की जय । समुद्र जल का प्रभाव ।]

वाचक : 1931 का 28 दिसम्बर। बापू लंदन से बम्बई वापस आए हैं। अपार जन-समूह उनकी जयजयकार कर रहा है। समुद्र-जल भी उमड़ता हुआ जैसे उन्हें प्रणाम कर रहा है। जय बापू, जय भारत माँ। जैसे नमक पानी में घुलकर समा जाता है···ठीक उसी तरह बापू भारत माँ में घुलकर एक हो गए हैं।]

[फेड्स इन—सत्यमेव जयते नानृतं सत्येन पंथा:।]

सत्य की जय होती है···देश का वह मार्ग हमारे लिए सत्य के द्वारा ही खुलता है।

[फेड्स इन—समुद्र का कोलाहल। मिश्रित समापन संगीत।]

एक औसत आदमी

पात्र

काका
रामस्वरूप
कन्हई
बड़े बाबू
प्रिंसिपल
सेठजी
नेहरू
खोसला
गाड़ीवान
मनराजी

[चलती हुई बैलगाड़ी, गाड़ीवान का बैलों को हाँकना। उड़ता-सा कंठ संगीत स्वर।]

मुखिया के मारे बिरहा बिसरिगा
बिरहा बिसरिगा, भूलि गयी कजरी कबीर
देखि गोरिया के मोहनी सुरतिया
अब उठे न करेजवा मा पीर

[पुनः बैलगाड़ी हाँकने का स्वर।]

रामस्वरूप : (हँसता है) अजीब बात है। इन गाँव वालों को चीजें बिसर-भूल जाती हैं। मैं भी उसी गाँव का हूँ, जहाँ का यह गाड़ीवान है, जिसकी गाड़ी पर बैठकर मैं स्टेशन से अपने गाँव जा रहा हूँ। पर मुझे कुछ नहीं भूलता। पता नहीं, कुछ न भूलने वाला इंसान सुभागा माना जाता है या अभागा।

[पुनः बैलों को हाँकने का स्वर।]

(स्वगत) यह कच्ची सड़क, मेरे गाँव को शहर से जोड़ने वाली मेरी कितनी जानी-पहचानी है। लगता है, यह सड़क मेरी जीवन-यात्रा की गवाह है। इस पर बैलगाड़ी के जो पहिए चल रहे हैं ये जैसे मेरी जिन्दगी, मेरे इतिहास-बोध, मेरी बीस-इक्कीस वर्षों की कठोर लड़ाई के भीतर की जमीन पर चल रहे हैं। हाँ बहुत कुछ अटपटा भी लगता है—ब्लाक-डेवलेपमेन्ट विभाग की पक्की इमारतें बिजली के सबस्टेशन कहीं-कहीं कच्ची सड़क को रौंदती चली जाती पक्की सड़कें···बहुत कुछ बदल भी गया है। यह···नाला पानी का···पहले नहीं था। कुछ अटपटा भी लगता है, यह सोचकर कि अतीत की निशानी मिट गयी।

[गाड़ीवान के बैलों को हाँकने का स्वर।]

गाड़ीवान : का सोचत हो साहब ? बस जल्दी गाँव पहुँच जाब ! (बैलों से) चल रे भइया चल !!

रामस्वरूप : (स्वगत) पता नहीं क्यों इस बार अपने गाँव जाते समय मेरा अतीत यूँ याद आ रहा है जैसे अभी कल ही घटा हो।

[पुनः गाड़ीवान के संगीत की ध्वनि।]

(स्वगत) मेरा गाँव बड़ा है। ठाकुर, ब्राह्मण, अहीर, ग्वाले, पौनी प्रजा सभी हैं

वहाँ। जमींदारों में रामायन सिंह ही मूल थे। उनकी सफेद पक्की बखरी ढाई मील दूर से ही चमकती है। उनका लड़का शेरसिंह मेरा हमजोली था। हम दोनों ने एक संग हाई स्कूल पास किया। सन् 48 की बात है। हमारी अवस्था कुल 18 वर्ष की थी।

[गाड़ीवान का गाना फिर उभर कर विलीन होता है।]

शेरसिंह के मामा कहीं डिप्टी थे सो उन्होंने शेरसिंह को इन्कमटैक्स विभाग में लगा दिया। और वह पट्ठा शेरसिंह कुछ ही दिनों बाद से डेढ़ सौ रुपये महीना घर भेजने लगा। और मैं !! हाई स्कूल फर्स्ट डिवीजन पास करके घर पर बेकार बैठा रहा। एक दिन काका ने मुझ पर अजब गुस्सा किया···

[ध्वनि-प्रभाव।]

काका : हमरे रमसरूपवा के हाल देखा। यह न किसी काम का है न किसी काज का···क्यों रे सरूपवा उहै मसल है कि पढ़े फारसी बेचै तेल, ई देखो किसमत का खेल···।

रामस्वरूप : मैं अभी आगे और पढ़ना चाहता हूँ काका।

काका : अरे जब तू इतना पढ़ कर दो कौड़ी का भी नहीं तो आगे कौन भरोसा, शेरसिंह तेरा ही तो हमजोली था, तेरे ही जितना पढ़ा···

रामस्वरूप : वह तो मुझसे कम था काका। वह तो सिर्फ पास था, मैं फर्स्ट क्लास यानी अव्वल दर्जा हूँ।

काका : अरे मुँह में कालिख लगा कर बहिजा, वह शेरसिंह डेढ़ सौ रुपये महीने भेजता है। और तू घर बैठा मक्खी मार रहल बाय···कि···।

[ध्वनि-प्रभाव।]

रामस्वरूप : (**स्वगत**) मैं इसी तरह एक वर्ष घर पर बेकार बैठा रहा अपमान सहता—काका के गुस्से का शिकार होता। पर उस दिन उत्तर क्या देता ? आज तो जानता हूँ कि देश में सैकड़ों दफ्तर ऐसे हैं जो व्यवसाय परामर्श और रोजगार संबंधी सलाह देने के लिए ही खोले गए हैं। किन्तु तब जो घटना घटी वह भी अजब रही। एक दिन मैंने छोटे कन्हई और अपनी पत्नी मनराजी की बातचीत छिपकर सुनी—

[संगीत उभरता है।]

कन्हई : भौजी ! सरूप भइया को आगे पढ़ना चाहिए। काका उन्हें डाँटते हैं तो मुझे भइया पर बड़ा तरस आता है।

मनराजी : देवरजी, एक जोड़ सोने के झुमका है, इनका चुप्पे बेचके अपने भइया को दे देव। जा कहो कि जाएँ पढ़ैं। हम अकेले न घर माँ सब सहिलैब···

कन्हई : और हम अकेले खेती के सब काम करि लैबै।

[संगीत-स्वर।]

रामस्वरूप : (स्वगत) कन्हई भाई और मनराजी की बातचीत ने मुझ पर जादू का-सा असर किया। मैं उसी रात घर से भाग निकला। एक अनजान शहर में पहुँचा। जिला परिषद के दफ्तर में एक नौकरी खाली थी। इम्तहान हुआ, मैं ही सफल हुआ। दफ्तर के बड़े बाबू स्नेह और आदर दिखाने लगे।

बड़े बाबू : ओह तो आप ही हैं श्री रामस्वरूप जी !

रामस्वरूप : जी हाँ, बड़े बाबू !

बड़े बाबू : तो अभी आपकी शादी-वादी तो नहीं हुई है न ?

रामस्वरूप : जी मेरी शादी···जी···वह तो हो चुकी।

[कई लोगों की हँसी।]

रामस्वरूप : (स्वगत) इस तरह उन लोगों का हँसना मुझे बिलकुल अच्छा नहीं लगा था। मेरी शादी मेरे बस की बात तो थी नहीं, ठीक उसी तरह जैसे हाई स्कूल के बाद शेरसिंह को उतनी आमदनी की झट नौकरी मिल गई थी और मैं एक वर्ष बेकार बैठा रहा।

[बैलगाड़ी की ध्वनि उभरती है।]

गाड़ीवान : (**बैलों को हाँकते हुए**) अपने गाँव गढ़ी के जमाना बहुत खराब है साहब।

रामस्वरूप : क्यों क्या इस वर्ष भी फसल अच्छी नहीं हुई ? सुना तो था कि इस साल बम्पर क्राप रही।

गाड़ीवान : ना साहब, फसल तो अच्छी हुई। जिहाँ बारिश कम हुई सो नये पम्प चले, बड़ी खुदाई रही सरकार, बढ़िया बीज दिया, खाद का बन्दोबस्त किया, खेती को उधार रुपिया दिहिस। बड़ा-बड़ा काम किया, बढ़िया फसल रही।

रामस्वरूप : तो फिर ?

गाड़ीवान : इहि झगड़ाबाजी-मारपीट-खींचातानी···(**बैलों से**) अरे जोर-जोर से चलो, सूरज डूबे से पहिले···(हाँकता है) जमाना बहुत खराब है साहब !

रामस्वरूप : (स्वगत) इस बेचारे अन्जान गाड़ीवान को क्या बताऊँ ! आज मिलिटरी में कैप्टेन हूँ, पर मेरी वह यात्रा कितनी गजब की है। मैं इन बीस-इक्कीस वर्षों में कहाँ कितना भटका हूँ। कितना देखा-सुना और चुपचाप अनुभव किया। जिला परिषद के दफ्तर में क्लर्की करता था। बीस रुपये घर भेजता और रात-दिन इण्टर पास होने के स्वप्न देखता। एक दिन बड़े बाबू ने उद्योगपति सेठ बाँकुरिया-मल से भेंट कराई। उन्हें मैं रोज सुबह 6 बजे अखबार पढ़कर सुनाने लगा और इसके लिए मुझे तीस रुपये महीने मिलने लगे। बड़े बाबू ने एक दिन कहा—

बड़े बाबू : रामस्वरूप, तुम इतने होनहार हो। तुम्हें अभी और पढ़ना चाहिए।

रामस्वरूप : जी, बड़े बाबू, पर कैसे ?

बड़े बाबू : अरे चिड़िया के बच्चे को कौन उड़ना सिखाता है, पंख लगे और वह उड़ा

आसमान में, समझे ?

रामस्वरूप : कुछ समझ में नहीं आया बड़े बाबू।

बड़े बाबू : देखो मैं तुम्हें रास्ता सुझा रहा हूँ, आगे तुम जानो तुम्हारा काम जाने।

रामस्वरूप : जी···!!!

बड़े बाबू : इंटरमीडिएट का इम्तहान दे डालो, बैठने भर का इन्तजाम करा दूंगा, हाँ बस···

रामस्वरूप : (स्वगत) और बड़े बाबू की इस बात से मुझे रोशनी मिली। नौकरी छोड़ मैंने जी-जान से पढ़ना शुरू किया। इंटर की परीक्षा में बैठा और पास हो गया।

[बैलगाड़ी के चलने की ध्वनि।]

रामस्वरूप : क्यों भई, गाड़ीवान, तुम बार-बार इस तरह मेरा मुँह क्यों निहारते हो।

गाड़ीवान : हम तुमका जानित हैं। फौज में कमण्डर हो ना !

रामस्वरूप : कमण्डर नहीं कैप्टेन···और वह भी ईश्वर की कृपा से भाई···

गाड़ीवान : अरे-अरे अपनी फुरगजवार माँ आपै तो एक नाम कमायो है साहब···।

रामस्वरूप : पता नहीं भाई।

गाड़ीवान : साहेब, कहाँ से आय रह्यो है ?

रामस्वरूप : अमृतसर से।

गाड़ीवान : ओह, अमृतसर··· (**बैलों को हाँकता है**) साहेब, आजकल इधर गाँवन मा चकबन्दी होय रहल बाय बड़े विचहिन साहेब। रोज-रोज फौजदारी, कत्तल, मुकदमा, घूस··· (**बैलों को हाँकता है।**)

रामस्वरूप : मैं नहीं जानता, आज इतनी सरकारी सहायता लेकर भी पंचायत इन चकबन्दियों के मामलों को क्यों नहीं सुलझा पाती ? पंचायती राज संस्थाओं का सम्पर्क भूमि रिकार्ड विभाग से है तो फिर चकबन्दी के मामलों में स्थिति खराब क्यों है ? क्यों भई गाड़ीवान, तुम्हारे गाँव की पंचायत कुछ काम नहीं करती क्या ?

गाड़ीवान : काम भा सो तो इन्कार नहीं। तालाब बना, पम्प लगा, नाली खुदी, सो तो है साहेब फिर बच्चा लोगन का पढ़ाई सुरू होआ, पानी परजा का स्कूल चला, वा को जमीन भी मिली पर जो यह अगुआ इतनो बन गए सो झगड़ा तो होय रहल बाय।

[बैलों को हाँकना। गाड़ी चलने की आवाज़।]

रामस्वरूप : इस झगड़े के चलते ही तो मुझे तार देकर बुलवाया गया है। मेरे घर के लोग समझते हैं कि मेरे पास न जाने कितने अधिकार हैं। पंचायत से भी अधिक। इसी तरह मेरे पास न जाने कितने रुपये हैं। मैं आज जाट रेजिमेन्ट में कैप्टेन हूँ। चीन और पाकिस्तान से दो लड़ाइयाँ लड़ चुका हूँ, पर आज गाँव जाते

समय मेरा कलेजा थर-थर काँप रहा है। मेरा सबसे प्यारा भरत जैसा छोटा भाई कन्हई अब इस दुनिया में नहीं रहा। जमींदारों से अपने खेत-जमीन के अधिकार के लिए इस चकबन्दी में लोगों ने उसका कत्ल कर दिया। काका की चिट्ठी जिस दिन मिली उस दिन से सारा जीवन एक दर्द बन मेरे सामने तैर रहा है। मैं पढ़ूं इसलिए उसने खेती सम्हाली, वह स्वयं मिडिल से आगे न पढ़ सका। पहले आम चुनाव के दिनों में उसने किस गम्भीरता से कहा था—

[इलेक्शन का ध्वनि-प्रभाव उभरकर पार्श्वगत होता है।]

कन्हई : भैया ! राष्ट्र का यह पहला इलेक्शन कैसा है भला। इसमें अलग-अलग जाति, धर्म के प्रतिनिधियों का चुनाव है क्या ?

रामस्वरूप : नहीं तो कन्हई, यह कैसी बात कर रहे हो ?

कन्हई : देख-सुन तो यही रहा हूँ। जो भी पार्टी का आदमी आता है वह सीधे जाति पर टूटता है या धर्म पर।

रामस्वरूप : यह तो बड़ी भयानक बात है। पर कन्हई, यह भी तो ध्यान में रखो कि पिछले एक हजार वर्षों से केवल जात और धर्म के नाम से ही साधारण व्यक्ति जगाया जाता रहा था, इसलिए इस कमजोरी का फायदा कुछ लोगों ने उठाने की कोशिश की है···पर···

कन्हई : हाँ, शायद यह सदा ऐसा नहीं चलेगा, लोग चेत जाएँगे। सब तो भाई-भाई ही हैं। खून एक जैसा ही है—चाहे वह ब्राह्मण हो या हरिजन या मुसलमान।

रामस्वरूप : (स्वगत) लेकिन हुआ क्या। आज इस विष की बेदी पर प्यारे कन्हई भाई का ही बलिदान हो गया। अब मैं किस मुँह से गाँव जाऊँ !

गाड़ीवान : (अचानक) साहब, साहब सोय रहलीं का ? (**बैलों को हाँकता है।**)

रामस्वरूप : (स्वगत) 1952 के पहले आम चुनाव के बाद मैं उस वातावरण से डर कर फिर गाँव से भाग गया था। पुराने दफ्तर में फिर नौकरी न मिली। सेठ बाँकुरियामल का भी एक स्कूल था, जहाँ मुझे पी० टी० टीचर की जगह मिली। अब लोग मुझे 'श्री सिंह' कह कर पुकारते जो मुझे बहुत अच्छा लगता। मैं वहाँ आनन्द से पढ़ाता। अन्य सभी अध्यापक सपरिवार रहते थे। मुझसे भी आग्रह किया गया कि मैं भी अपनी 'फेमिली' मँगाऊँ। प्रिंसिपल साहब ने भी आदेश दिया कि मुझे फेमिली तुरन्त मँगा लेनी चाहिए। लोग मेरे चरित्र के बारे में तरह-तरह की बातें फैला रहे थे। किन्तु, जब मेरी फेमिली आई, दो बच्चों को संग लिए मेरी अपढ़ गँवार धर्मपत्नी लम्बा-सा घूँघट निकाले, तो शहर के लोगों की हँसी न रुकी—

[तीन-चार महिलाओं की दबी हँसी।]

एक स्वर : श्री सिंह की धर्मपत्नी !

दूसरा स्वर : धर्मपत्नी नहीं दुल्हन कहो ! देखते नहीं, अभी ब्याह-मंडप से सीधा घूँघट

निकाले चली आ रही है।

तीसरा स्वर : और वे बच्चे किसके हैं ?

चौथा स्वर : लगता है, मिस्टर सिंह किसी वज्र देहात के हैं, मिसेज सिंह क्या हैं कि बिल्कुल 'फोक आर्ट' हैं।

[सम्मिलित हँसी।]

रामस्वरूप : मेरी पत्नी मनराजी का भी शहर की औरतों में मन नहीं रमा। अक्सर वह झगड़ पड़ती या कहीं से भी अपमानित अनुभव कर बेचारी मुझसे ही लड़ने बैठ जाती।

मनराजी : हिंया रहब, हमरे मान के नहीं ना।

रामस्वरूप : क्यों नहीं ! हिम्मत हारने से कहीं काम चलता है ? तुम भी कुछ पढ़-लिख डालो। शहर का कायदा-कानून सीख लो। इसमें बात ही क्या है ?

मनराजी : नाहीं-नाहीं ! हमरे मान के ई नहीं ना।

रामस्वरूप : मुझ पर तो दया करो मनराजी। सोचो न, क्या हमारा सारा जीवन इसी तरह बीतेगा ?

मनराजी : तो का भा, का शहरै माँ जिन्दगी है। राउर तो मरद हैं, चिंता कै कौन बात है। आप मजे से हिंया रहौ। हम बच्चों समेत गाँव में रहिबे। तुम कौनो चिन्ता ना करो। अपनी तन्दुरुस्ती का ख्याल राखौ—सहरू मरद ना बन जायो।

रामस्वरूप : और बच्चों की शिक्षा वगैरा ?

मनराजी : अब तो गाँव माँ स्कूल खुल गा है। हुँआ पढ़िकै जहाँ जाए का होइ, आगे पढ़ै का भेज दैबे।

रामस्वरूप : और मेरी पत्नी और बच्चे गाँव में और मैं अकेला उस शहर में। घर पर साठ रुपये माहवार देता था, पर काका तब भी मेरी तुलना शेरसिंह से करते थे जो डेढ़ सौ रुपये भेजता था। इधर मेरी पत्नी ने अपने भोलेपन की बातों में अपने पड़ोसियों में अपनी जाति भी बता दी थी। बात धीरे-धीरे प्रिंसिपल साहब तक पहुँची। उन्होंने मुझे बुलाकर कहा—

प्रिंसिपल : मिस्टर सिंह !

रामस्वरूप : जी, प्रिंसिपल साहब !

प्रिंसिपल : मिस्टर सिंह, आपकी जात क्या है ?

रामस्वरूप : जात ! मनुष्य···क्या यह काफी नहीं है ?

प्रिंसिपल : वह तो सही है, मैं यूँ ही पूछ रहा हूँ ?

रामस्वरूप : इस तरह जात पूछना अपमानजनक है।

प्रिंसिपल : मैंने आपको अपनी जाति का समझा था।

रामस्वरूप : जो आपकी जाति का नहीं है, वह भी आदमी ही कहा जाएगा—जानवर नहीं ?

प्रिंसिपल : पर मिस्टर सिंह, आप इस तरह बिगड़ क्यों रहे हैं ?

[ध्वनि-प्रभाव]

रामस्वरूप : (स्वगत) मैं उस स्कूल से निकाल दिया गया। जब मैं सोचता हूँ कि हम भारत की कुल आबादी के बीस प्रतिशत हैं, एक लाख पन्द्रह हजार से अधिक हरिजन और आदिवासी छात्र सरकारी सहायता से उच्च शिक्षा प्राप्त कर रहे हैं, यह संख्या पन्द्रह प्रतिशत हर वर्ष बढ़ाई जाती है, देश में पाँच सौ आदिवासी विकास खण्ड हैं, सरकारी सेवाओं में गत दस वर्ष की अपेक्षा प्रशासन सेवा में अवसर सात गुना हो गए हैं। सर्वत्र असुरक्षित स्थान हैं तब भी फिर ऐसा क्यों ? क्यों है यह दूषित वातावरण ?

[गाड़ी चलने की ध्वनि तेज होती है।]

गाड़ीवान : साहेब, अब गाँव दुइ कोस और बाकी है। चिराग जले तक हम बड़े मजे में पहुँच जाब। (बैलों को हाँकता है।)

रामस्वरूप : (स्वगत) मैं स्कूल से निकाल दिया गया था। एक बार भारत की राष्ट्रीयता पर मैंने राष्ट्रीय एकता की भावना जागृत करने के लिए एकधर्मी राष्ट्र-भावना पर लेख लिखा था। इस बात से कुछ अधिकारी नाराज हो गए और किसी बहाने मेरा प्रोविडेन्ट फण्ड जब्त करवा दिया गया। एक बार इच्छा हुई—इस झूठ और अन्याय का कसकर मुकाबला करूँ, पर दूसरे ही क्षण याद आया, झूठी राष्ट्रीयता की अन्धी चेतना ने राष्ट्रपिता गांधी की उस तरह हत्या की थी। मैं तो बिल्कुल एक मामूली औसत आदमी हूँ। मैंने इस अन्याय की शिकायत सेठ बाँकुरियामल से नहीं की। सेठजी की कोठी पर उनके बच्चों की ट्यूशन का काम मिल गया। एक दिन मैंने सेठजी से कहा—सेठजी, निवेदन है एक आप से···

सेठजी : बोलो।

रामस्वरूप : मैं बी० ए० पढ़ना चाहता हूँ।

सेठजी : अपन को क्या, पढ़ो न ! पन तू पढ़ेगा कैसे ? यहाँ कोठी का काम-काज कौन देखेगा ?

रामस्वरूप : मैं अपना सब काम उसी तरह करता रहूँगा। बस दोपहर के वक्त तीन घंटे के लिए छुट्टी चाहूँगा।

सेठजी : अच्छा, कल सुबह हमें याद दिलाना। हाँ हम बड़े मुनीम को बोल देगा। वह दोपहर के वक्त किसी को यहाँ रखेगा।

रामस्वरूप : धन्यवाद सेठजी।

सेठजी : पन हम बोलता है, हमारा काम में हर्जा नहीं होना चाहिए। हम मुस्तैदी माँगता है।···हाँ···सुनो···बी० ए० पास होने के बाद हमसे अपनी पगार बढ़ाने के लिए मत बोलना।

[बैलगाड़ी चलने की आवाज उभरती है।]

रामस्वरूप : (स्वगत) मैं बी० ए० पढ़ने लगा हिस्ट्री आनर्स में। सर्वेन्ट्स क्वार्टर कहे जाने वाले पाँच में से एक कमरे में मैं रहता। कोठी में तीन तरह के भोजन बनते थे। उत्तम भोजन सेठ के परिवार के लिए, मध्यम भोजन आने-जाने वालों के लिए और तीसरी कोटि का नौकर-चाकरों के लिए। मैं इसी तीसरी कोटि का हकदार था। कोठी पर सुबह-शाम अफसरों और सेठजी के बीच जो बातें होतीं, वहाँ का जैसा वातावरण होता उससे मैं चकित रह जाता।

[अनेक लोगों की हँसी-बातचीत।]

सेठजी : क्यों जी, भारत की इस दूसरी पंचवर्षीय योजना का क्या मतलब है ?

एक स्वर : जी हाँ, पहली ही काफी थी।

[सामूहिक हँसी]

दूसरा स्वर : मसौदाकारों ने इसके चार उद्देश्य रखे हैं—पहला राष्ट्रीय आय में पर्याप्त बढ़ौती···।

तीसरा स्वर : अजी आय या आयु !!

[सामूहिक ठहाके]

सेठजी : अजी रामस्वरूप जी, इस माफिक खड़े मुँह क्या देख रहे हो, बैरे से बोलो—सिगरेट लाए, बोतल लाए, काजू-मेवे···!

चौथा स्वर : अजी सेठजी, आपने काजू की बात खूब कही। हमें जिलों में सर्कुलर भेजना पड़ा है कि काजू का इस्तेमाल अब पब्लिक पार्टियों में नहीं होगा। यह टाप एक्सपोर्ट गुड्स है। डालर, पौंड···

[बोतलों के कार्क खुलने की तथा गिलासों की आवाज़।]

एक स्वर : इसे ही राष्ट्रीय पेय क्यों नहीं बनाते ? (हँसता है।)

दूसरा स्वर : अजी सुनिए भी, दूसरी पंचवर्षीय योजना। अखबारों में भी छपा है, सुनिए पहला—राष्ट्रीय आय में बढ़ती, दूसरा—औद्योगिकीकरण, तीसरा—रोजगार के अवसरों का बड़े पैमाने पर विस्तार, चौथा—आय और धन की असमानता में कमी और आर्थिक शक्ति का समत्वपूर्ण विभाजन।

तीसरा स्वर : क्या कहा, समत्वपूर्ण विभाजन···थोड़ा और डालना तो गिलास में, फिर यह भाषा समझ में आएगी।

[सामूहिक हँसी]

रामस्वरूप : (स्वगत) इस वातावरण से मेरा कलेजा काँप उठता इसके विपरीत स्वर्गीय नेहरू के वे शब्द याद आते हैं जो उन्होंने 26 मई, 1958 को कहे थे—

नेहरू का स्वर : मैं उस उग्र प्रकार का राज्य समाजवाद नहीं चाहता जिसमें राज्य सर्वशक्तिमान होता है और प्रायः सब क्रियाकलापों का संचालन करता है। इसी-लिए मैं आर्थिक शक्ति का विकेन्द्रीकरण चाहता हूँ। समाजवाद के सम्बन्ध में मेरी

धारणा है कि उसमें राज्य के प्रत्येक व्यक्ति को उन्नति का समान अवसर प्राप्त होना चाहिए।

रामस्वरूप : (स्वगत) : कहाँ नेहरू और कहाँ ये लोग ! राजनीतिक लोगों और सरकारी अफसरों को भ्रष्ट कर उनसे उल्टे-सीधे काम करवाने वाले लोग। इनमें से एक हैं श्री खोसला जो किसी मंत्रालय से भ्रष्टाचार के आरोप के कारण निकाले गए थे। अब एक बड़ी फर्म में बड़ा ओहदा मिल गया था—पाँच हजार रुपये प्रति-माह पर। एक दिन उन्हीं से मेरी झड़प हो गई क्योंकि मैं उनके आने पर उठकर खड़ा नहीं हो सका।

खोसला साहब : बेवकूफ बदतमीज, पता नहीं, ऐसे नालायक लोगों को क्यों यहाँ रहने दिया जाता है ?

रामस्वरूप : मुझसे गलती हुई साहब, मेरी तबीयत ठीक नहीं है, बुखार है।

खोसला साहब : बुखार है ? क्या कोठी को अस्पताल बना रखा है !!

स्त्री स्वर : (हलो ! डॉक्टर की ध्वनि) मैं सेठ बाँकुरियामल के यहाँ से बोल रही हूँ··· जी हाँ, रिशेप्सन से···सुनिए, डाली की तबीयत खराब है जी, फौरन आइए··· जी हाँ, अब तक उसे छः डॉक्टर देख चुके हैं पर डायग्नोज नहीं हो पाया है। जी हाँ···अर्जेन्ट विजिट।

[टेलीफोन रखना—मोटर आने की ध्वनि।]

कई स्वर : 'अजी डाली की तबियत कैसी है ?' 'अजी, मैं तो दफ्तर से सीधा भागा आ रहा हूँ।' 'डाली जैसा जानवर तो लाखों में एक है।'

सेठजी : अजी, क्या पूछते हो, इसे स्विट्जरलैण्ड से मँगाया था। इस पैडिग्री की यह दूसरी जिन्दा है पूरे संसार में। खोसला साहब, अभी तुरन्त की फ्लाइट से इसके इंजेक्शन मँगाने का इन्तजाम कीजिए।

खोसला साहब : पर इतनी जल्दी कैसे होगा ?

सेठजी : कैसे नहीं होगा ! तुम यहाँ पर आखिर क्यों हो। मैं जिन पर पानी की तरह रुपया बहाता हूँ वे किस मर्ज की दवा हैं ? चाहे पालीटिकल प्रेशर चाहो या आफिशियल—दोनों हमारे दाएँ-बाएँ हाथ में हैं। अपन डाली की जान बचाना है।

रामस्वरूप : (स्वगत) डाली, एक कुत्ता ! उसकी बीमारी पर सभी बेचैन। और मैं, मैं एक साधारण मनुष्य। और एक सेठजी का कुत्ता—दोनों की किस्मत में कितना कितना फर्क है। गांधी और नेहरू भारतीय मनुष्य को जिस मानवीय गरिमा से मण्डित देखना चाहते हैं क्या ये लोग काले धन और शक्ति से इस स्वप्न के हत्यारे नहीं हैं।

[बैलगाड़ी की चाल उभरती है।]

गाड़ीवान : साहब का सोचत हई। कुछ हमई के बताइए न।

रामस्वरूप : क्या बताऊँ भाई ! सोच रहा था क्या विदेशी सरकार से मुक्त होकर हमने

कुछ तरक्की भी की है। यूं भी लगता है कि 1950 में गणतंत्र स्थापित होना एक बड़ा कदम था फिर 1951, 57, 62 और 67 के आम चुनाव, जिला खण्ड और ग्राम स्तर पर पंचायती राज बढ़ते चरण ही तो हैं।

गाड़ीवान : हाँ साहब (बैलों को हाँकता है।)

रामस्वरूप : फिर ये गाँवों को शहर से मिलाने वाली सड़कें, ग्राम विकास कार्यक्रम, खेती के नये तरीके, बेहतर बीज और खाद उपलब्ध होना, काफी संख्या में गाँवों में बिजली तक का पहुँच जाना, निकट ही डाकघर, स्कूल होने आदि से जीवन अवश्य ही बेहतर हो गया है। किन्तु···

गाड़ीवान : साहेब सुना हई दुई पंचसाला योजना बीत चुका ?

रामस्वरूप : दो नहीं अब तीन कहो।

गाड़ीवान : सुना साहब करोड़ों रुपया भी खर्च ह्वै चुका ? हे राम···हे राम···

रामस्वरूप : (स्वगत) अब मैं इस सीधे-सादे गाड़ीवान को कैसे समझाऊँ कि करोड़ों रुपये खर्च हो चुके हैं, तो देश की पूंजी भी बढ़ी है। राष्ट्रीय आय भी बढ़ी है पर बहुत-सी नौकरशाही और बीच के सेठ-साहूकारों के पेट में जा छिपी है। चन्द अधिकारियों के आलस्य, कुप्रशासन और भ्रष्टाचार के कारण जो असफलता आई है वह कितनी सच है। सफलता-असफलता से परिपूर्ण इस आज के वातावरण की घटनाएँ भी कितनी अजब हैं। जिस खोसला साहब को मैं मन-ही-मन घृणा की दृष्टि से देखता था, एक दिन उन्होंने मुझे बुलाकर कहा—

खोसला साहब : सुना है, तू बी० ए० पास हो गया है ?

रामस्वरूप : जी।

खोसला साहब : कहीं नौकरी भी तो चाह रहा होगा ?

रामस्वरूप : जी हाँ···

खोसला साहब : ये ले चिट्ठी, इस मिनिस्ट्री में मिस्टर टी० सोनिया हैं, उनसे कल मिल लेना।

रामस्वरूप : (स्वगत) मैं दूसरे दिन मिस्टर सोनिया से मिला। सच, मुझे तत्काल नौकरी मिल गई। असिस्टेंट रिसर्च आफिसर की पोस्ट। मैं सेठ बाँकुरियामल के इस अहसान को कभी नहीं भूल सकता था। मैं अब भी वहीं रहता हूँ। भोजन अपना अलग बनाता तथा सेठजी की यथासंभव सेवा करता। एक दिन सेठजी और खोसला साहब की बातचीत सुनी—

खोसला साहब : बात यह है सेठजी कि रामस्वरूप को झटपट मैंने इसलिए नौकरी दिला दी कि वह अब यहाँ न रहे। वह ठीक आदमी नहीं है हमारे लिए।

सेठजी : पन वो बड़ा ईमानदार आदमी है।

खोसला साहब : ईमानदार आदमी ही तो खतरनाक होता है। आपको पता नहीं वह पोलिटिकली बहुत कनशियेन्सस आदमी है। कोठी में जितने अखबार, पत्र-पत्रिकाएँ आती हैं वह सब पढ़ता है, नेहरूजी, शास्त्रीजी के जब कभी यहाँ लेक्चर होते हैं वह जरूर सुनने जाता है।

सेठजी : ओह, जे बात ।

खोसला साहब : रामस्वरूप गाँव से संघर्ष करते-करते इतने ऊपर आया है सो नेचुरली पूँजी-सत्ता और चालू व्यवस्था के प्रति इसका विरोध होगा ही ।

सेठजी : जो भी हो, रामस्वरूप सच्चा आदमी है ।

खोसला साहब : सच्चा और जेनविन किसी समय आग लगा सकता है । हमें ऐसे लोगों पर कभी भरोसा नहीं करना चाहिए ।

सेठजी : पन रामस्वरूप तो हम से कोई पगार नहीं लेता । मुफ्त में हमारी सेवा करता है । सो करने दो, जो है सो उस पर नजर रखो ।

रामस्वरूप : (स्वगत) जिस क्षण यह बातचीत सुन रहा था उस क्षण महात्मा गांधी के ये शब्द मेरे मन में गूँज रहे थे ।

गांधीजी का स्वर : मैं मानता हूँ, आध्यात्मिक दृष्टि से एक मनुष्य को भी जो लाभ हो तो उससे सारा संसार उसके साथ लाभान्वित होगा और यदि एक भी मनुष्य गिरे तो उस हद तक सारा संसार गिरता है ।

[गाड़ी की चाल उभरती है ।]

गाड़ीवान : साहेब एक बात पूछी, बुरा मति मान जाई ।

रामस्वरूप : हाँ-हाँ पूछो ।

गाड़ीवान : हम लोगन के हाल दशा कब बदली साहेब ?

रामस्वरूप : गाड़ीवान के उस भोले प्रश्न को सुनकर मुझे बेहद खुशी हुई । यह भी सच है कि देश की जनता जगी है, सोचने-विचारने लगी है । इस जागरण के क्रम को देश के कुछ निहित स्वार्थ वाले या नौकरशाही अब रोक नहीं सकेंगे । प्रजातंत्र का प्रशासन गंगा की धारा है । गन्दी नालियों का पानी इसकी महत्ता को कम नहीं कर सकेगा । अच्छे-बुरे सब जगह होते हैं । तंत्र में भी हैं और मंत्र में भी । अधिकतर लोग अच्छे हैं—बेशक अच्छे और कुशल हैं ।

[गाड़ी की आवाज तेज—बैलों को हाँकना ।]

गाड़ीवान : साहेब, अब तेज चलैक चाही साँझ ह्वै रही है । (हाँकना)

रामस्वरूप : गाड़ी के पहिये की चाल में जो तेजी है वैसी ही मेरे बाद के जीवन में तेजी आ गई थी । मेरी असिस्टेंट की नौकरी से मेरे काका को खुशी नहीं हुई । उनके दिल-दिमाग में वही शेरसिंह बसा था जो अब घर पर इतने रुपये भेजता है कि उससे जमींदार ने एक नया मकान और बनवा लिया है, कुछ जमीन भी खरीदी है, एक ट्रैक्टर भी लिया है पर मैं काका को क्या कैसे बताऊँ कि शेरसिंह इनकम टैक्स विभाग में केवल डेढ़ सौ का वेतन पाता है, शेष धन तो घूस और बेईमानी से कमाता है । मैं ऐसा नहीं कर सकता । रुपया ही सब कुछ नहीं है ।

[संगीत विलीन । पुनः बैलगाड़ी की स्थिर चाल ।]

गाड़ीवान : अब सूरज डूबे ही चहेत साहब । (**बैलों को जोर से हाँकता है ।**)

रामस्वरूप : 1962 के तीसरे आम चुनाव के समय में फिर मेरे जीवन में एक मोड़ आया था। तब औद्योगिक जगत में देश उन्नति कर रहा था। अमरीका, रूस ही नहीं बल्कि पूर्वी यूरोप, अरब देश, अफ्रीका आदि देशों से भारत की गाढ़ी मित्रता और पंचशील के सूत्रों में एशिया तथा यूरोप के देश बँधने लगे थे परन्तु चीन को यह अच्छा न लगा। उसने अकस्मात भारत पर आक्रमण कर दिया। देश-भर में एमरजेन्सी कायम हुई। एक दिन एमरजेन्सी कमीशन से सेकण्ड लेफ्टीनेंट के लिए मैं चुन लिया गया। पहाड़ी युद्ध की मेरी ट्रेनिंग शुरू हुई।

[युद्ध-ट्रेनिंग का ध्वनि-प्रभाव।]

रामस्वरूप : (**स्वगत**) इन्फेन्ट्री जाट रेजीमेंट में स्थान पाया। यह सब इतनी तेजी से घटा मानो फौजी जीवन के लिए ही मेरा जन्म हुआ हो। हाँ सच, और मेरे भीतर भी जो एक युद्ध था···सामाजिक आर्थिक स्तर पर···न्याय और अन्याय को लेकर सोचा था कि भीतर के युद्ध को यहाँ अभिव्यक्ति मिल जाएगी। पर वह युद्ध गंभीर होता गया। उधर गाँव में काका सब पर रौब और शान डालने लगे, जमींदार से उनकी बोलचाल बन्द हो गई। काका चारों ओर डींग हाँकते—

काका : अरे हमार रमसरूपवा फौज में कप्तान है गवा—दुई-दुई पिस्तौल बाँधता है··· जिसको चाहे उड़ा दे भइया, उसका तीन खून माफ है समझे कि नहीं? ई है कि जमींदार अपन घर के होते बड़े, हमार पूत तो अब फौज का अफसर है। अब हमारे केउ कुछ नाहीं बिगाड़ सकत। चाहे कोई आयके फौजदारी कै ले या मरमुकदमा लड़ लै।

रामस्वरूप : (**स्वगत**) मैं काका को लिखता कि उनका इस प्रकार सोचना दुर्भाग्यपूर्ण है, पर गाँव की सैकड़ों वर्षों की जहालत और गुलामी के सामने सब बेकार। उनकी चिट्ठी आती—

काका : आगे समाचार है कि पूरा मकान खपड़ैल का हो गया। चारों ओर पक्की कनिस लग गई। हमार बिचार, बाहर का बैइठका पक्का बने और उसमें चूनाकारी हो। बैलों, मवेशी का घर भी अब बनना चाहिए, सो तुम एक हजार रुपये का मनीआर्डर भेजो···

रामस्वरूप : (**स्वगत**) उधर चीन से युद्ध की सीमा असीम होती गई। हमारी बटेलियन को एक हफ्ते के भीतर नेफा बार्डर पर पहुँचना था। हम तैयारी में लगे थे कि एक दिन देखता क्या हूँ कि मेरे सामने खोसला साहब खड़े हैं।

खोसला साहब : हैलो मिस्टर रामस्वरूप! हाउ डू यू डू?

रामस्वरूप : हाउ डू यू डू खोसला साहब! सेठजी कैसे हैं?

खोसला साहब : भई, सेठजी ही ने तो मुझे तुम्हारे पास भेजा है। जरा इधर एकांत में तो आना—एक कान्फीडेंशियल बात है। (**धीमे स्वर में**) आप मुझे अपने मेजर जनरल से मिला दीजिए और सेठजी के बारे में कस कर रिकमेंड कर दीजिए।

रामस्वरूप : पर काम क्या है?

खोसला : एक लाख कम्बल सप्लाई करना है। वह आर्डर किसी तरह हमें मिलना चाहिए।

रामस्वरूप : यह गैर-मुमकिन है खोसला साहब !

खोसला : ढाई हजार आपको कमीशन है।

रामस्वरूप : बस-बस, आप चुपचाप सीधे यहाँ से भाग जाइए. सारी दुनिया का इतना पतन नहीं हुआ है।

[संगीत का स्वर]

रामस्वरूप : (स्वगत) हम नेफा बार्डर पर चीनियों का मुकाबला के करने लिए तैनात युद्ध का पहला अनुभव होने को था। रात का समय था कहीं कोई भी चीनी सैनिक हुए। दूर-दूर तक नहीं दिखाई पड़ रहा था। एकाएक आधी रात के समय उन अँधेरी पहाड़ियों में से आग के शोले दगने लगे···

[बन्दूक। मशीन गन इत्यादि, युद्ध का ध्वनि-प्रभाव]

रामस्वरूप : (स्वगत) बर्फीली हवा और घुप अँधेरे में हम कुछ चीनी सैनिकों को समाप्त करते तो उससे दुगुनी संख्या में चीनी सैनिक फिर आ पहुँचते। एक सँकरी घाटी में अपने मेजर सहित हम बीस-पच्चीस लोग एक बार सैकड़ों चीनियों में घिर गए। हम आखिरी गोली तक उनसे लड़ते रहे, बाद में हमने डिफेंस लेना शुरू किया। हम काफी पीछे हटते चले आए। वे हम पर गोलियाँ चलाते रहे। मेजर सहित हम अब केवल पाँच बचे थे। हम एक ऐसे पाइंट पर आ पहुँचे जहाँ एक ओर पहाड़ी नदी थी और दूसरी ओर घना जंगल। हमने केमाफ्लाज किया। हम नदी के कगार से लटककर छिप गए। करीब सौ सवा सौ चीनी सैनिकों की टुकड़ी हमें जीवित पकड़ने के लिए आयी। जैसे ही वे हमें खोजने के लिए तितर-बितर हुए हमने कृपाण और संगीन से उन पर आक्रमण किया। देखते-देखते पचास का सफाया कर दिया। शेष भाग गए। दिस को उठाकर हमने नदी में डाल दिया। दूसरे दिन हेलीकाप्टर सहायता को आ गया।

[गाड़ी की ध्वनि]

गाड़ीवान : साहेब, अब अपन गाँव दिखाई दे रहा है बस आधा घंटा के भीतरे पहुँच जाब···

रामस्वरूप : (स्वगत) चीन के इस युद्ध की समाप्ति पर अगले वर्ष मुझे द्वितीय श्रेणी महावीर चक्र से पुरस्कृत किया गया था। पर इन अनुभवों के बाद जब छुट्टी पर गाँव आया था, वहाँ के वातावरण से मैं घबड़ा गया। एक जाति का दूसरी से वैर, गाँववालों को ब्लाक डेवलपमेन्ट अधिकारियों से झगड़ा—काका की बदनामी ये आपसी टकराहट याने आदर्श शून्यता के कारण अजब विकृत वातावरण और फिर मैं गाँव से भाग चला। भागता ही रहा कि फिर 1965 में पाकिस्तानी युद्ध में मैं अपनी रेजीमेंट के साथ मेरठ-अमृतसर को चला।

[ध्वनि-प्रभाव—जय जवान के नारे—जयजयकार।]

रामस्वरूप : (स्वगत) जहाँ भी हमारी स्पेशल रुकती, हमें फूलमालाओं से पाट दिया जाता। सारा भारत, सारे नर-नारी, बच्चे-जवान-बूढ़े, सब एकसाथ एक स्वर और जोश में हमारा हौसला बढ़ाते। अपना समस्त प्यार, इज्जत, प्रेरणा, आशीर्वाद हम पर न्योछावर करते। लगता सारा भारत हमारे लिए और हम भारत के गौरव के लिए जी रहे हैं।

[भारत माता की जय आदि नारे।]

रामस्वरूप : (स्वगत) हमारा पहला मोर्चा हाजीपीर पर लगा। यहाँ हम बेतरह विजयी हुए। दुश्मन द्वारा जबरदस्ती हथियाए हुए कश्मीर के उस भाग को हमने पहली बार स्वतंत्र किया। वहाँ के हमारे उन भाइयों ने भारत की जय के नारों से हमारा स्वागत किया। हाजीपीर के बाद स्यालकोट, वहाँ का टैंक युद्ध भारत के इतिहास में अमर रहेगा।

[ध्वनि-प्रभाव]

रामस्वरूप : इस युद्ध में हमें अपने प्रधान मंत्री श्री लालबहादुर शास्त्री का यह अमर वाक्य प्रेरणा देता रहा : हम रहें या न रहें यह हमारा झण्डा रहना चाहिए। इस युद्ध के बाद मुझे महावीर चक्र प्रथम श्रेणी का मिला। मैं दुबारा पुरस्कृत हुआ। मैं कैप्टेन बन गया।

[गाड़ी की ध्वनि]

गाड़ीवान : साहेब, गाँव आ गया।

रामस्वरूप : अच्छा···हाँ···लो···ये।

[ध्वनि-प्रभाव—पैदल चलने के।]

रामस्वरूप : काका राम राम, पाँव लागी माँ, राम-राम दादू···

[कई लोगों की उपस्थिति का ध्वनि-प्रभाव विलीन]

एक स्वर : (दूर से) अरे काकू, कहाँ चले ? सुनो तो।

दूसरा स्वर : जै राम जी की, कहो क्या खबर है ?

एक स्वर : अरे भाई काकू, महतो का लड़का फौज का कप्तान है। हाँ-हाँ, हाँ-हाँ, तार दे के महतो ने बुलाया है उसे। अब तो चकबन्दी मा महतो के खेत का सारा मामला ही चाँदी है।

दूसरा स्वर : हाँ भाई, चकबन्दी अफसर फौज के कप्तान की बात न मानेगा तो क्या हमारी मानेगा।

एक स्वर : अरे तो क्या हम यूँ ही मुँह ताकेंगे। होगा कप्तान, हमारे लिए तो वही राम-सरूपवा है। आखिर हम जमींदार हैं इस गाँव-जवार के। कन्हई के खून से सब की

नानी मर गई है।

दूसरा स्वर : हाँ और क्या ? अगर जरा भी चालबाजी हुई तो उधर डिप्टी साहब के यहाँ उजरदारी और इधर चकबन्दी अफसर और रामस्वरूपवा की पिटाई···वह पिटाई कि बेटों को छठी का दूध याद आ जाए और सारी कप्तानी यहीं धरी की धरी रह जाय···जब हमने कन्हई की शेखी मिट्टी में मिला दी तो···

एक स्वर : (धीरे से) अरे चुप-चुप !

[ध्वनि-प्रभाव, दृश्य-परिवर्तन।]

रामस्वरूप : काका, क्या मुझे बुलाया था ?

काका : भइया रामस्वरूप ! बात ई है कि सारे गाँव भर में भयानक पार्टीबन्दी है। हमरे जातटोला से जमींदार लोगन के पुश्तैनी दुश्मनी है। और जब से ई चकबन्दी गाँव मा आई है, सब जातन मा जहर घुलि गै है। और हमें तो कन्हई के खून ने कमर ही तोड़ दी है। अब तू ही बदला लो भाई !

रामस्वरूप : यह गृहयुद्ध मुझसे नहीं लड़ा जाएगा काका। मैं किस-किस से बदला लूँ ?

काका : तो औरतों के माफिक चूड़ी पहन लो। हमें पहले से ही अगर ई पता होत कि तू पूत नहीं जनाना निकलेगा तो तार देई के हम तुहै नाई बुलाइत।

रामस्वरूप : काका !

[संगीत की झनकार उभरती और टूटती है।]

रामस्वरूप : (थके स्वर में) मनराजी !

मनराजी : का है ?

रामस्वरूप : बच्चे कहाँ हैं ?

मनराजी : बड़ा लड़का परदेसी भैंस चरावै गा है। मँझला बाजार गा है तमाखू-बीड़ी लावै, बाकी गाँव बगिया माँ, कतहुँ खयालत होई।

रामस्वरूप : तो बच्चे स्कूल नहीं जाते। मैं उनकी पढ़ाई के लिए जो अलग से सवा सौ रुपये माहवार भेजता था।

मनराजी : वोहि का काका मुकदमन माँ झोंकत रहै।

रामस्वरूप : सच ?

मनराजी : और का हम झूठ बोलिबे। तुम्हार एक रुपया हमरे वरै गउमांस के बराबर है।

रामस्वरूप : मनराजी, तुम तो ऐसे मत बोलो···

मनराजी : देवर के कतल के मुकदमा में अब तक तीन हजार से जियादा लगि गा। पाँच सौ रुपैया तो अकेलन दारोगा ने घूस लिहिस—नहीं तो व मुकदमै ना चलावत रहै। औ हजार रुपैया सरकारी वकील ले लिहिस।

रामस्वरूप : बस-बस, चुप रहो मनराजी ! मुझे और कैफियत नहीं चाहिए। 1948 में हाई स्कूल जब पास किया था तब 18 वर्ष का था। आज 1969 है। इक्कीस साल अब बीते हैं, इस बीच गाँव से शहर तक, शहर से युद्धभूमि तक जो कैफियतें

देखी हैं उनकी मुझे याद मत दिलाओ।

मनराजी : ए सुनौ तो···

रामस्वरूप : तुम ही सुनो (**कान में कुछ कहता है**) तैयार हो ?

मनराजी : सब तैयारै समझौ, बस छोटै बच्चन के पास कौनो बढ़िया कपड़ा नहीं ना।

रामस्वरूप : कोई बात नहीं, जल्दी से किसी तरह यहाँ से चले चलो।

[पैरों की आवाज]

रामस्वरूप : काका !

काका : मैं समझ गया। मेरी बात नहीं मानोगे—बच्चों को भी यहाँ से ले जाओ।

रामस्वरूप : हाँ काका।

काका : अच्छा ! पहुँच कर चिट्ठी देना और पाँच सौ रुपये का झट से बीमा भेज देना···

[संगीत ध्वनि। प्रभाव—गाड़ी की चाल उभरती है।

गाड़ीवान : बहुत जलद गाँव से लौट जाई रहे साहब।

रामस्वरूप : हाँ भाई।

गाड़ीवान : फिर कब आओगे साहेब ?

रामस्वरूप : अब क्या लौटूंगा भाई !

गाड़ीवान : नहीं साहेब, ऐसे दिल छोट मत किहा जाय।

[गाड़ी की आवाज]

रामस्वरूप : (स्वगत) दिल छोटा करने के लिए क्या पर्याप्त नहीं है। सेठ बाँकुरियामल प्रिंसिपल साहब खोसला साहब, आदि भ्रष्ट व्यक्ति। क्या वे इसके जिम्मेदार नहीं ? मैं तो एक अदना आदमी हूँ मेरे दुख और पश्चाताप का क्या ? गांधी और नेहरू और शास्त्री जैसे महापुरुष और उनके पवित्र संकल्प ! वे पूरे देश को खुशहाल बनाना चाहते रहे और हम···हम केवल अपने को देखते रहे—अलग-अलग करके—खंडित करके ऐसे नहीं चलेगा। जूझना पड़ेगा हर स्तर पर—हर घेरे से—पता नहीं मनुष्य क्या है और क्यों है ? मुझे इस घिरते हुए अंधकार से बाहर जाना होगा। पर कहाँ···? वह रोशनी किधर से आ रही है ?···ठीक एकता के क्षितिज से···उसे जमीन पर उतारना होगा।

[गाड़ी की ध्वनि-विहीन रेलवे ट्रेन की सीटी बजती है। ट्रेन चलती है—समापन संगीत]

□□

किताबघर